उपदेशामृत

ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज

उपदेशामृत

ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज

सङ्कलनकार तथा अनुवादक :

श्री हंसराज नागर

प्रकाशक :

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट,

वशिष्ठगुहा आश्रम,

पो०—गूलर दोगी, जि० टिहरी-गढ़वाल (उत्तरप्रदेश)

मूल्य] १९७९ [रु० ७-००

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट के लिए श्री स्वामी चैतन्यानन्द जी द्वारा प्रकाशित तथा गोपालसिंह द्वारा श्री कैलास विद्या प्रेस, ब्रह्मानन्द-आश्रम, मुनि-की-रेती, जिला टिहरी-गढ़वाल (उ० प्र०) में मुद्रित

प्रथम (हिन्दी) संस्करण—१९७९

(१००० प्रतियाँ)

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

प्राप्ति-स्थान :
व्यवस्थापक,
श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट
वशिष्ठगुहा आश्रम,
पो० गूलर दोगी, जिला टिहरी-गढ़वाल (उत्तर प्रदेश)

समर्पण

मौन ही रह कर यद्यपि, प्रभु ने रहित-संशय किया था ।
किन्तु लीला में कभी तो, मधुर वचनामृत दिया था ॥
वचनमय यह रूप अनुपम, श्रेय का पाथेय ही है ।
आज वाणी आपकी, पदपद्म में अर्पित हुई है ॥

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्त्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।

ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज

प्राक्कथन

यह छोटी-सी पुस्तक ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज के कुछ थोड़े-से पत्रों में प्राप्त उपदेशों तथा कुछ अन्य उपदेशों का सङ्कलन है जो उन्होंने कुछ भक्तों को लिखे थे अथवा मौखिक रूप से समय-समय पर कहे थे।

स्वामी जी महाराज की संक्षिप्त जीवनी परिशिष्ट में दी हुई है जिससे उनके विषय में थोड़ी जानकारी हो सके। यों तो ऐसे महान् आत्मदर्शी को पहचानना बहुत बड़ी समस्या है। इसके लिए दिव्य दृष्टि की अनिवार्यता है। इससे अधिक कहने की गुञ्जाइश नहीं है।

महाराज जी की अपने भक्तों को अध्यात्म की ओर ले जाने की प्रणाली निराली ही थी। उनके उपदेश प्रायः मूक भाषा में ही होते थे। वे कहा करते थे कि *"Silence is the best speech."* भक्तों की समस्याओं को पूरी सहानुभूति से सुनते अवश्य थे; परन्तु उत्तर में केवल "हा, हा" करके जोर से हँस देते थे। यही उनकी समस्याओं का उनका उत्तर होता था और इतने से ही उन समस्याओं का समाधान हो जाया करता था। उनके प्रशिक्षण की विधि मौखिक उपदेशों द्वारा नहीं के बराबर ही रहती थी। वे किसी को न साधना करने को, और न मन्त्र लेने को ही कहते थे। यह दृष्टि द्वारा शक्तिपात से होता था। जो लोग उनके पास आते-जाते रहते थे उनमें इस प्रकार शक्तिपात के फलस्वरूप अपने-आप साधना करने की भावना

उठने लगती थी। वे स्वयं पूरी तरह से गुप्त रहना ही पसन्द करते थे। वे कहा करते थे कि *"I want to live unknown and die unknown."* ऐसी परिस्थिति में उनके लिखित उपदेश बहुत ही कम हैं। बहुत प्रयास करने पर बहुत थोड़े लोगों से जो प्राप्त हो सके हैं उन्हें इस पुस्तक में भिन्न-भिन्न विषयों में बाँट कर अलग-अलग अध्यायों में रख दिया गया है। इन उपदेशों से साधकों को मार्गदर्शन और साधना-क्रम में सहायता मिले इसी उद्देश्य से यह सङ्कलन महाराज जी की जन्मशताब्दी पर प्रस्तुत है।

इस सङ्कलन में तीन प्रकार के उपदेशों का सम्मिश्रण है। एक तो महाराज जी के अंग्रेजी पत्रों से, दूसरे उनके मलयालम में लिखे थोड़े से उपदेशों से और तीसरे वशिष्ठ-गुहा में सङ्कलनकर्त्ता को जो उपदेश प्राप्त हुए हैं। मलयालम भाषा का हिन्दी अनुवाद सद्गुरु महाराज के मलयाली भक्त ब्रह्मचारी अनन्तकृष्ण जी की सहायता से किया गया है तथा अंग्रेजी भाषा के उपदेशों का अनुवाद श्री जगन्नाथप्रसाद जी शुक्ल, वेदान्ताचार्य, साहित्याचार्य की सहायता से किया गया है। अपने सरल स्वभाव के कारण उन्होंने आदि से अन्त तक पूरे मनोयोग से मेरी सहायता की। वे अंग्रेजी, हिन्दी और संस्कृत के विद्वान् और गुप्त साधक भी हैं। स्थानीय दैनिक 'स्वतन्त्र-भारत' के अवकाश-प्राप्त सम्पादक तथा स्थानीय संस्कृत विद्यालय के अवकाश-प्राप्त अध्यापक होने के कारण मूल के भाव के उपयुक्त हिन्दी शब्दों के चयन में उनके सुझाव विशेष रूप से बड़े सारगर्भित और उपयुक्त मिले।

अन्तिम रूप देने के पहले मेरे मन में यह भावना उठी कि

एक बार इस पुस्तक को फिर से देख लिया जाय कि पूज्य गुरुदेव के उपदेशों का भाव अनुवाद में भली प्रकार प्रकट हो गया है और भाषान्तर होते हुए भी यथासम्भव मूल का भाव बना हुआ है। श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल जी के अस्वस्थ होने के कारण मैं किसी अन्य विद्वान् की खोज में था ही कि मेरी दृष्टि श्री अवधेश दयाल जी पर पड़ी। मैं उनके पूरे परिवार से परिचित हूँ। श्री अवधेश दयाल जी की योग्यता देख कर मैंने उनसे इस कार्य के लिए सहायता माँगी और उन्होंने अपने स्वाभाविक सौहार्द से इसको स्वीकार किया। श्री अवधेश दयाल जी *double M. A., LL. B.* तो हैं ही साथ ही शिक्षा-विभाग के अवकाश-प्राप्त प्रवक्ता हैं। अंग्रेजी, हिन्दी और संस्कृत के विद्वान् हैं। परिवार की परम्परानुसार अच्छे साधक भी हैं और हिन्दुओं के धार्मिक ग्रन्थ—रामायण, गीता, भागवत, उपनिषदादि के साथ इस्लाम तथा इसाई धर्मों के ग्रन्थों पर भी अधिकार रखते हैं।

उन्होंने मेरे साथ इस पुस्तक को फिर से जाँचा और इसकी पुष्टि की कि अनुवाद में मूल का भाव विद्यमान है। कहीं-कहीं अधिक बल देने के लिए जो उन्होंने सुझाव दिये वे इसमें सम्मिलित कर दिये हैं।

मैं ब्रह्मचारी अनन्तकृष्ण जी का, श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल जी का तथा श्री अवधेश दयाल जी का अत्यन्त आभारी हूँ। जिन भक्तों ने मेरी विनती स्वीकार करके अपने पास सुरक्षित उपदेशों को, जो उनकी अमूल्य निधि है, मुझे इस सङ्कलन में सम्मिलित करने के हेतु प्रदान किये हैं, उनका भी मैं विशेष रूप से आभारी हूँ; क्योंकि यह पुस्तक उनके इस उदार सहयोग पर आधारित है।

अन्त में यह कहना आवश्यक है कि पुस्तक में कुछ स्थानों पर एक ही प्रकार के उपदेशों की पुनरावृत्ति-सी जान पड़ती है उदाहरणार्थ 'आत्मा का सत्स्वरूप' नाम वाले अध्याय में। इन उपदेशों को संक्षिप्त किया जा सकता था, परन्तु ऐसा इस-लिए नहीं किया गया कि एक तो अनुवाद में मूल के भाव को बनाये रखने का प्रयास ही कठिन होता है और यदि इनको मिलाकर संक्षेप किया जाय तो भाव में अवश्य अन्तर आ जाता है जबकि इस सङ्कलन में प्राथमिकता इसकी रही कि मूल का भाव बना रहे।

श्री गुरुदेव भगवान् ने अलग-अलग साधकों के हितार्थ समय-समय पर, बल देने के लिए, उनके मन में बिठाने के लिए एक ही बात को अलग-अलग शब्दों में कहा है; अतः उनको उसी तरह यहाँ रखने का प्रयास किया गया है।

भक्तजनों से अपनी सीमा और त्रुटियों के लिए विनम्र क्षमा-याचना है। आखिर हूँ तो श्री गुरुदेव का शिशु ही, प्रौढ़ तो हूँ नहीं।

६-शिवपुरी,
लखनऊ—२२६ ००१

सद्गुरु देव भगवान् की चरणरज,
हंसराज नागर

प्रकाशकीय

पूज्यपाद त्यागमूर्त्ति १००८ श्री पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज के दिव्य उपदेशों का संग्रह 'उपदेशामृत' श्रद्धालु भक्तों के सामने प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है। प्रस्तुत पुस्तक में समय-समय पर गुरु महाराज द्वारा भक्तों को दिये हुए पत्र, उनके मुखारविन्द से सुने हुए तथा उनकी डायरी मलयालम की तिरुवाई मोताबी नामक पुस्तक से अनुवादित है। इसका हिन्दी अनुवाद या सङ्कलन श्री पण्डित हंसराज नागर, ६, शिवपुरी ने अपना तन-मन लगा कर बहुत ही तल्लीनता से किया है। अपना अमूल्य समय इस महत् कार्य में लगाने के परिणामस्वरूप यह 'उपदेशामृत' हिन्दी में प्राप्त हो सकी। इसको हिन्दी में छपवाने का वायदा हमारे भूतपूर्व स्वर्गीय जॉयन्ट कन्वीनर ट्रस्टी श्री माधवप्रसाद श्रीवास्तव, १५३, राजेन्द्रनगर, लखनऊ ने किया था। दुर्भाग्यवश इसी बीच वे दुनिया से चल बसे। उनके बाद स्वर्गीय श्री आनन्दकुमार वातल; ५८, लूकर गञ्ज, इलाहाबाद, कन्वीनर ट्रस्टी ने इस कार्य को सम्पन्न करने का वायदा किया; लेकिन दुर्भाग्यवश उनके भी सपने अधूरे रह गये। इस वर्ष (१९७९ में) डा० ए० एन० श्रीवास्तव के आवास-स्थान पर भक्तों की जो जनरल मीटिंग हुई, उसमें उक्त 'वचनामृत' छपवा कर गुरु महाराज की जन्म-शताब्दी के शुभ अवसर पर अर्पण करने का निश्चय किया गया। उसी निर्णयानुसार इस पावन शुभ अवसर पर आप लोगों के सम्मुख यह 'उपदेशामृत' प्रस्तुत कर रहा हूँ। महा-

पुरुषों की वाणी गागर में सागर है, उसे समझना भी अत्यन्त ही गूढ़ है। ईश्वर-कृपा या सद्गुरु की कृपा से ही किसी-किसी की समझ में आ सकती है।

श्री पण्डित हंसराज नागर अच्छे साधक हैं। उन्होंने अपने अथक परिश्रम से इसका सङ्कलन एवं अनुवाद बिना किसी त्रुटि के मूल के शब्दों का अविकल रूपान्तर किया है, तथापि अगर कोई त्रुटि रह गयी हो तो पाठक गण उसे क्षमा करें। भगवान् उनको ऐसे सद्ग्रन्थों तथा सत्सङ्ग का प्रचार करते रहने का सौभाग्य प्रदान करें! इस महान् कार्य के लिए मैं उनका आभारी हूँ। साथ ही साथ यह आशा करता हूँ कि पाठकगण इस पुस्तक (उपदेशामृत) का पान करके अपनी अध्यात्म-पिपासा की तृप्ति करेंगे तथा परम शान्ति प्राप्त करेंगे।

श्री पुरुषोत्तमानन्द ट्रस्ट के लिए,

स्वामी चैतन्यानन्द

श्री गुरुपादुका पञ्चरत्न

स्थूलसूक्ष्मसकारणान्तरखेलनं परिपालनं ।
विश्वतैजस प्राज्ञचेतसमन्तरं निखिलात्मकम् ॥
चित्कलापरिपूर्णमन्तर – चिच्छमादिनिरूपणं ।
प्रातरेव हि मानसे मम भावये गुरुपादुकाम् ॥ १ ॥
पञ्च-पञ्च हृषीकदेहमनश्चतुष्क – परम्परं ।
पञ्चभूतसकामषट्कसमीरशब्द – निरन्तरं ॥
पञ्चकोशगुणत्रयादिसमस्तधर्म – विलक्षणं ।
प्रातरेव हि मानसे मम भावये गुरुपादुकाम् ॥ २ ॥
हंसचारुमखण्डनादमनेकवर्णमतः परं ।
शब्दजालचरं चराचर – यन्त्रदेहनिवासिनम् ॥
चक्रराजमनाहतोद्भवमेघवर्णमतः परं ।
प्रातरेव हि मानसे मम भावये गुरुपादुकाम् ॥ ३ ॥
बुद्धिरूपमबुद्धकं त्रितयैककूटनिवासिनं ।
निश्चलं निरतप्रकाशमनेकमूलकलाद्दशम् ॥
पञ्चमान्तर खेलनं निजसिद्धसंयमिगोचरं ।
प्रातरेवहि मानसे मम भावये गुरुपादुकाम् ॥ ४ ॥
व्योमवद्बहिरन्तरस्थिरमक्षरं निखिलात्मकं ।
केवलं परिशुद्धमेकमजन्नहि प्रतिमूलकम् ॥
पञ्चतत्त्वविनिर्मलं निजधाममोक्षमपादकं ।
प्रातरेव हि मानसे मम भावये गुरुपादुकाम् ॥ ५ ॥
पादुकापञ्चरत्नं ये पठन्ति भक्तिसंयुताः ।
तदर्थं चानुतिष्ठन्ते ते प्राप्नुवन्ति तत्पदम् ॥

अर्थ—स्थूल, सूक्ष्म और कारण—इस प्रकार त्रिविधि शरीर से मुक्त इस जीव के अन्तःकरण में प्रत्यगात्मा (अन्तर हृदय में स्थित आत्मा) के रूप में नित्य लीला विहार करने वाले और साधक शिष्य का निज-कृपा से नित्य पोषण करने वाले तथा जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों जीव-दशाओं के विश्व तेजस और प्राज्ञरूप स्वामी बन कर विराजमान, चित्त के भीतर लीला विहार करने वाले, सारे संसार में व्याप्त, सकल जगत् का स्वरूप स्वयं ही धारण करने वाले एवं चैतन्य कला से परिपूर्ण और अन्तःकरण में चित् शक्ति का उदय करने वाले तथा शम, दम आदि गुणों को दृढ़ करने वाले, ऐसे (आत्मस्वरूप) श्रीगुरुदेव की चरण-पादुकाओं का मैं प्रातः तड़के उठ कर मन ही मन ध्यान करता हूँ ॥१॥

इस शरीर में पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, इनके अतिरिक्त अन्तःकरण चतुष्टय—मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार —भी सक्रिय हैं। ये सब शक्तियाँ परस्पर सहयोगपूर्वक जीवन यापन में सक्रिय हैं। स्थूल शरीर पञ्च भूतों –पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश—से उत्पन्न है। पूर्व-जन्म के सकाम कर्मों के फलस्वरूप निर्मित प्रारब्ध से प्रेरित होकर, प्राण भी निरन्तर शब्द करता हुआ सञ्चारित हो रहा है। इस शरीर में पञ्चकोष हैं—अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष और आनन्दमय कोष। जीवन के क्रियाकलापों के प्रेरक तीन गुण हैं - सतोगुण, रजोगुण तथा तमोगुण। इन कोषों और गुणों के सर्व लक्षणों से विलक्षण (पृथक्) (आत्म-स्वरूप) श्री गुरुदेव की चरण-पादुकाओं का मैं प्रातः तड़के उठ कर मन ही मन ध्यान करता हूँ ॥२॥

इस मानव-शरीर में आत्मारूप पवित्र हंस विराजमान है। इस शरीर में अनेक दिव्य ध्वनियाँ होती ही रहती हैं, योगियों को ही इनका अनुभव होता है। इन ध्वनियों के बाद अनेक वर्णों की ज्योतियों के भी दर्शन होते हैं। जीवात्मा अनेक रङ्गों वाला उत्तम हंस है। शास्त्रों का अपार साहित्य ही वह वन है, जिसमें यह हंस विचरण करता है। सम्पूर्ण विराट् सृष्टि एक यान्त्रिक देह है जिसमें आत्मतत्त्व ब्रह्मरूप से व्यापक होकर निवास करता है। यही आत्मा शरीरस्थ (मूलाधार से सहस्रार तक) समस्त यौगिक चक्रों का स्वामी है। विशुद्ध अन्तःकरण से ध्यानस्थ होने पर यह अनाहत (अनहद) नाद का अनुभव करता है और फिर मेघवर्ण की दिव्य ज्योति के भी दर्शन होते हैं। ऐसे दिव्य अनुभव से युक्त (आत्मस्वरूप) श्री गुरुदेव की चरण-पादुकाओं का मैं प्रातः तड़के उठ कर मन ही मन ध्यान करता हूँ ॥३॥

शुद्ध बुद्धि स्वरूप होकर भी जो बौद्धिक चेतना के परे हैं, तीन गुणों के साथ लीला करते हुए जो भी एकमात्र गुणातीत पद के पर्वत-शिखर पर ही विराजमान रहते हैं, जो सम्पूर्ण वृत्तियों का निरोध करके निश्चल समाधि अवस्था में ही स्थित रहते हैं, तथापि जो समस्त कल्याण के मूल हैं और समस्त कलाओं को धारण किये हैं, विशुद्ध हृदय में लीला विहारी, सहजसिद्ध, संयमी, तपस्वियों को ही प्राप्त है, ऐसे (आत्मस्वरूप) श्री गुरुदेव की चरण-पादुकाओं का मैं प्रातः तड़के उठ कर मन ही मन ध्यान करता हूँ ॥४॥

जो आकाश के समान बाहर और भीतर व्यापक हैं और एकदम निर्विकार, एकरस रहते हैं, जो शाश्वत अव्यय हैं,

कदापि नाश या ह्रास को प्राप्त नहीं होते तथा सब रूपों में वही हैं, सर्वत्र व्याप्त हैं, जो परम विशुद्ध केवल एकमात्र तत्त्व हैं, जो अजन्मा हैं तथा समस्त सृष्टि के आदि कारण हैं जिनका कारण कुछ नहीं हो सकता, पञ्च तत्त्वों के (स्थूल, सूक्ष्म, शुद्ध अथवा अव्यक्त) सभी रूपों से जो नितान्त परे हैं, प्रपञ्चात्मक विश्व से अस्पृष्ट परम निर्मल जिनका स्वरूप है, एक अखण्ड (अंशादि से रहित) पूर्ण मोक्षपद ही जिनका धाम है, ऐसे (आत्मस्वरूप) श्री गुरुदेव की चरण-पादुकाओं का मैं प्रातः तड़के उठ कर मन ही मन ध्यान करता हूँ ॥५॥

जो लोग इस पादुका-पञ्चरत्न को भक्तिभाव से पढ़ते हैं और तत्कथित मानसिक स्थिति में विराजमान रहते हैं, वे उस परम पद को प्राप्त कर लेते हैं।

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ-सङ्ख्या
समर्पण	... ...	तीन
प्राक्कथन	... ...	पाँच
प्रकाशकीय	... ...	नौ
श्री गुरुपादुका पञ्चरत्न	...	ग्यारह
१. ईश्वर	... ...	१
२. आत्मा का सत्स्वरूप	... ...	५
३. सद्गुरु तथा शिष्य	... ...	१६
४. श्रद्धा और विश्वास	... ...	२०
५. प्रेम और भक्ति	... ...	२४
६. समर्पण	... ...	३१
७. सत्सङ्ग	... ...	३३
८. सेवा	... ...	३७
९. मन	... ...	३८
१०. विवेक और वैराग्य	... ...	४६
११. मोह और आसक्ति	... ...	५७
१२. आत्म-निरीक्षण	... ...	६२
१३. काम और क्रोध	... ...	६७
१४. अहं	... ...	७०
१५. साधना	... ...	७२

विषय			पृष्ठ-सङ्ख्या
१६. ध्यान तथा जप	...	...	८६
१७. ब्रह्मचर्य	...	...	१००
१८. प्रार्थना	...	...	१०३
१९. स्वस्थ जीवन और मृत्यु	...	...	१०८
२०. कर्म	...	...	११२
२१. कर्त्तव्य	...	...	११५
२२. कठिनाइयाँ	...	...	११७
२३. श्रीमद्भागवत पर आधारित उपदेश	...	...	१२०
२४. आत्मा का स्वरूप	...	...	१३८

परिशिष्ट

ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज की संक्षिप्त जीवनी ... १४०

ईश्वर

ईश्वर सदा हममें ही निवास करता है। वह हमारी आँख की आँख है, नाक की नाक, त्वचा की त्वचा, जीभ की जीभ, कान का कान और मन का मन है। उसकी कृपा के बिना न हम देख सकते हैं, न श्वास ले सकते हैं, न स्पर्श कर सकते हैं, न बोल सकते हैं, न स्वाद ले सकते हैं, न सुन सकते हैं और न सोच ही सकते हैं। उसके बिना ये सब शक्य नहीं है। यह सत्य होते हुए भी उसको कौन सदा स्मरण करता है? यह कितना बड़ा आश्चर्य है!

× × ×

तुम यह नहीं कह सकते कि भगवान् नहीं है। वह अवश्य है। तुम्हारा अस्तित्व ही इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। उसके बिना किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं रह सकता। सब-कुछ वह ही है। वह बहुतेरे आकार लेता है। तुम उनमें से किसी भी आकार को चुन कर उसका ध्यान और पूजा करो। यह तुम्हारे लिए हितकर होगा। भगवान् में महान् श्रद्धा रखो और उसको भूलो मत।

× × ×

भगवान् की महिमा का विचार करो। उसने जो अनुग्रह हम पर किये हैं और निरन्तर करता ही रहता है उस पर यदि ध्यान दोगे तो क्या उसको एक क्षण के लिए भी भूल सकोगे?

× × ×

ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है इसको जानो। वह हमारा हित करने के लिए सदा तत्पर रहता है ; परन्तु हम इस तथ्य को बिलकुल नहीं समझते। यदि हम उससे निष्कपट भाव से प्रार्थना करें तो कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जिसके पाने में हमे कठिनाई हो। हम सब-कुछ प्राप्त कर सकते हैं।

× × ×

ईश्वर की महिमा को कौन जान सकता है ? एक क्षण में लखपति भिक्षुक हो जाता है और भिक्षुक लखपति। यदि इन लीलाओं पर ध्यान दोगे तो तुम एक क्षण के लिए उस भगवान् से दूर न रह सकोगे। आनन्द मूर्त्ति भगवान् के साथ ऐक्य प्राप्त करके आनन्द मग्न रहने का प्रयास करो।

× × ×

भगवान् की अपने अन्दर प्रतिष्ठा मान कर हम जो भी काम करेंगे वह हमें बाँधेगा नहीं। प्रकाश में अन्धकार कैसा ?

× × ×

भगवान् बड़ा ही करुणामय है। जब वह जान लेगा कि हमको सचमुच उसकी कामना है तो वह हमको अपनाने में हिचकिचायेगा नहीं।

× × ×

भगवान् सर्वेसर्वा है। वह अपने भक्तों की आवश्यकता को सदा देखभाल रखता है।

× × ×

भगवान् को जाना कैसे जाय ? जप, ध्यान, प्रार्थना, कीर्त्तन तथा सत्सङ्ग उसको जानने के साधन हैं।

× × ×

भगवान् की कार्यविधि रहस्यमय है।

× × ×

भगवान् निराकार भी है और साकार भी। अपने भक्तों के हेतु वह अनेक रूपों में प्रकट होता है।

× × ×

मैं भगवान् का हाथ हर जगह देखता हूँ। हम नश्वर जीव हैं ही क्या ? हम कर ही क्या सकते हैं ? सब-कुछ वह ही—एक-मात्र वह ही है। श्रीमद्भगवद्गीता बताती है कि :

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥"

वह ही नियन्त्रक है। वह सबके—हर एक प्राणी के हृदय में बैठा हुआ है और सबको अपनी इच्छानुसार नचाता रहता है। इस सत्य को समझो और धर्मपरायणता, निःस्वार्थ सेवा, ध्यान, पूजन, प्रार्थना इत्यादि द्वारा उससे अधिकाधिक प्रेम बढ़ाओ। तब तुम मुक्त हो जाओगे।

× × ×

ईश्वर को सन्तुष्ट करने में कठिनाई क्या है ? वह हमारे मन में जो भी सङ्कल्प-विकल्प उठते हैं उन्हें सदा देखता रखता है। हमारी भावना सत्य होनी चाहिए, वह शीघ्र ही प्रसन्न हो जायगा।

× × ×

आँख खोल कर जहाँ भी देखो सर्वत्र भगवान् का वैभव दिखायी देगा। परन्तु नेत्रहीन क्या देख सकता है ? सचमुच इससे अधिक अज्ञान क्या हो सकता है कि हम भगवान् के वैभव का अनुभव न कर सकें जो कि भीतर और बाहर हर जगह प्रकाशित और व्याप्त है।

× × ×

शून्य शून्य ही है। उसका कोई मूल्य है ही नहीं; परन्तु उसके साथ एक का अङ्क लगाने पर सारे शून्य का उसके स्थान के अनुसार मूल्य हो जाता है। ऐसे ही वह 'एक' (भगवान्) ही विश्व का सार है। यदि वह 'एक' न हो तो विश्व केवल एकमात्र शून्य ही रह जायगा। इसलिए वही 'एक' जो सदा सर्वदा सबका एकमात्र सच्चा सार है उसका सदा दर्शन करो। शून्य में मन लगा कर नष्ट क्यों होते हो ?

× × ×

चुम्बक के सान्निध्य में जैसे लोहा घूमता है उसी तरह परमेश्वर के सान्निध्य में यह विश्व घूमता है। परमेश्वर के साक्षात्कार से यह संसार एक दम लोप हो जाता है। वह (परमेश्वर) अनादि है; परन्तु जगत् का आदि और रक्षक भी है। उस सर्वेश्वर की शरण में जाओ।

× × ×

भगवान् एकमात्र सत्य है, अन्य सब मिथ्या ही मिथ्या हैं। सब-कुछ एकमात्र भगवान् पर ही निर्भर है। इसलिए भगवान् से प्रेम करने का प्रयास करो।

× × ×

भगवान् की करुणा के बिना उस तक पहुँचना अति-कठिन है और बिना सेवा के व्यक्ति उसकी करुणा की आशा कैसे कर सकता है !

× × ×

इस मृत्युलोक में क्या तुम एक भी स्थान दिखा सकते हो जो आपत्ति-रहित हो ? केवल एक ही स्थान ऐसा है जो निरापद है और वह है भगवान् के चरणारविन्द।

× × ×

ईश्वर स्वावलम्बी का सहायक होता है। अतः उसी की शरण में जाओ।

●

आत्मा का सत्स्वरूप

तुम वज्ञानिक रीति से खोज करो। हर एक व्यक्ति 'मैं', 'मैं' कहता रहता है। यह 'मैं' है क्या इसको जानने का प्रयास करो। यदि तुम सतत प्रयत्न करते रहोगे तो यह खोज ही तुमको उस ध्येय तक पहुँचा देगी। प्राचीन ऋषि इसी क्रम का अनुसरण करते थे। वे इसकी खोज करते थे कि वे कैसे सुनते थे, कैसे बोलते थे, कैसे स्पर्श करते थे, कैसे सोते थे इत्यादि। इस खोज के परिणामस्वरूप उन्होंने सत्य का ज्ञान प्राप्त किया और इसको निर्भयता से घोषित किया। उन्होंने इसके लिए मार्गदर्शन भी कराया है। अतः हमको तो केवल उनके बताये हुए मार्ग पर चलना है। इसको निश्चित रूप से समझ लो कि वास्तविक 'मैं' स्वभाव से शाश्वत है, सत्-चित्-आनन्दस्वरूप है। यह 'मैं' न शरीर है, न मन, न बुद्धि। यद्यपि वह इस शरीर में रहता है फिर भी वह इससे बिलकुल निर्लिप्त है। वह अपने शुद्धतम गौरव से विराजमान है। परन्तु इस सत्य को कोई नहीं जानता। इसी के कारण सारी चिन्ता, सारा दुःख, अनेकानेक जन्म-मृत्यु भोगने पड़ते हैं। मनुष्य के जैसे विचार होते हैं वैसा ही वह बन जाता है। यदि वह वास्तविक 'मैं' का चिन्तन करे तो वह वैसा ही बने बिना नहीं रह सकता। अनभिज्ञ लोग इसको समझते नहीं। इसीलिए उनको

राम, कृष्ण, शिव आदि का अर्चन करने को कहा जाता है। इससे उनको अपने मन को बाहरी विषयों से खींच कर अपनी इष्टमूर्त्ति में भक्ति द्वारा पूर्ण रूप से लगाने का अवसर मिलता है।

कोई भी साधना-मार्ग जो तुम्हें रुचे अपनाओ; परन्तु साथ ही जिसको संसार कहते हैं उसकी नश्वरता का भी ध्यान रखो और इस दृश्य जगत् से परे जाने की तीव्र इच्छा बनाये रखो और उस सत्य तक पहुँचो जो शाश्वत सत्य है।

× × ×

'मैं', 'मैं' सदा ही लोग कहते रहते हैं; पर यह 'मैं' है क्या इसको खोजने का प्रयास करने वाले बहुत ही कम हैं। द्रष्टा दृश्य वस्तु से अलग है। 'मैं' शरीर को देखता है, इसलिए वह शरीर नहीं। ऐसे ही 'मैं' न मन है, न बुद्धि, न अहङ्कार ही; वह शरीर, बुद्धि अहङ्कार आदि से पृथक् है। जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति को भी 'मैं' देखता है। अतः यह 'मैं' इन तीनों अवस्थाओं से भी पृथक् है। इससे यह ज्ञात होता है कि कोई ऐसा तत्त्व इस शरीर में ही है जो इसमें रहते हुए भी शरीर के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रखता। हमको इस परम सत्य को जानना चाहिए कि यह ही वह तत्त्व है जो इस शरीर को चैतन्य देता है। इसी तत्त्व को द्रष्टा कहते हैं। हम न शरीर हैं, न बुद्धि, न कुछ और ही वरन् वास्तविक द्रष्टा हैं। जब यह परम सत्य समझ में आ जाता है तब हमारा सारा क्लेश स्वयं ही नष्ट हो जाता है और हम परमानन्द में लीन हो जाते हैं।

× × ×

जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु अवश्य होगी। सृष्टि की सारी वस्तुएँ नाशवान् हैं। वास्तविक तत्त्व--आत्मा—शाश्वत

है। तुम आत्मा हो जिसका न जन्म है न मृत्यु। उसका आश्रय लो। "'मैं' न शरीर हूँ, न मन, न अहङ्कार ही। मैं आत्मा हूँ - सत्-चित्-आनन्द हूँ। मैं शाश्वत सत्ता, शाश्वत ज्ञान और शाश्वत आनन्द हूँ।" इस पर ध्यान जमाओ। निरन्तर विचार करो कि तुम आत्मा हो। निरन्तर भगवान् का स्मरण करो। उसको कभी भूलो मत।

× × ×

इसको निश्चित रूप से समझ लो कि जिसको 'मैं', 'मैं' कहते हो वह मन, बुद्धि, अहङ्कारादि नहीं है। इन सबका जो साक्षी शुद्ध चैतन्य है, वही 'मैं' है।

× × ×

सत्य वह है जो सदा एक ही अवस्था में रहता है, घटता-बढ़ता नहीं है। सत्य केवल एक ही है—अद्वितीय है। तुम इस बात को जानने का प्रयास करो कि क्या तुममें कोई वस्तु ऐसी है जिसको सत्य कहा जा सकता है। तुम्हारा शरीर, ज्ञानेन्द्रियाँ और मन ये सत्य नहीं हैं; परन्तु तुममें कोई तत्त्व ऐसा है जो सत्य है जो तुम्हारे शरीर का, तुम्हारी ज्ञानेन्द्रियों का, तुम्हारे मन का तथा तुम्हारी नींद का भी साक्षी है। यह तत्त्व कभी सोता नहीं है, सदा जाग्रत ही रहता है। सब-कुछ छोड़ कर–शरीर, इन्द्रियाँ, तथा सारे विश्व को छोड़ कर–उससे सम्पर्कस्थापित करो। यही वास्तविक 'मैं' है जिसका ज्ञान हो जाने पर तुम सदा के लिए मुक्त हो जाओगे।

सभी अवतार इस महान् सत्य को घोषित करते रहे हैं। हमारा हिन्दू-धर्म—हमारा धर्म केवल हिन्दू-धर्म ही नहीं है—सनातन धर्म है जो किसी मनुष्य का चलाया हुआ नहीं है। उसका अस्तित्व सदा से ही है, उसका न आदि है, न अन्त ही।

व्यास जी ने भागवत रची, वैसे ही कृष्ण ने गीता रची इत्यादि। राम, कृष्ण इत्यादि का वास्तविक अर्थ एक ही है—अद्वितीय है। कृष्ण का अर्थ सत्-चित्-आनन्द है, ऐसे ही राम का। हमारे पुराण हमको उसी तरह से शिक्षा देते हैं जैसे छोटे बच्चों को खेल-खिलौनों से पढ़ाने की प्रणाली है। वे कथाओं के द्वारा भक्तों को शनैः-शनैः भगवत्-तत्त्व की ओर—सत्य की ओर—ले जाते हैं।

अतः तुम विचार करो कि तुम हो क्या? द्रष्टा दृश्य वस्तु से पृथक् होता है। अतः तुम न शरीर हो, न मन ही। तुम इन सबसे ऊपर हो—सत्-चित्-आनन्द-स्वरूप, पूर्ण निश्चल नीरवता (*All silence*) हो। यदि तुम उत्साहपूर्वक 'ॐ' के द्वारा इस निश्चल नीरवता का ध्यान करोगे तो तुम सफल हो जाओगे।

× × ×

'मैं' सदा ही निर्लिप्त है; परन्तु तुमने उसको शरीर, मन और उनकी भिन्न-भिन्न क्रियाओं के साथ मिला दिया है जैसे सुनना, देखना इत्यादि। यदि तुम उसको सदैव पृथक् रखने में सफल हो जाओ तो सारा जीवन-सङ्घर्ष ही समाप्त हो जाय। मनुष्य को पहले परोक्ष ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। तत्पश्चात् उसका अपरोक्ष ज्ञान अनुभव करना चाहिए।

× × ×

'मैं' ही केवल स्थायी है। 'मैं' ही सार है—सत्-चित्-आनन्द है। 'मैं' शरीर, मन या इन्द्रियाँ नहीं है। यथार्थ में राम भी सत्-चित्-आनन्द है। वैसे ही कृष्ण, श्रीरामकृष्ण परमहंस भी। यदि तुम उनको शरीरमात्र समझोगे तो भूल करोगे। आगे बढ़ते जाओ।

सृष्टि देखने में सत्य प्रतीत होती है, पर वास्तव में सत्य है नहीं। 'मैं' ही केवल सत्य है। अपने को जानने से तुम सबको जान जाओगे। मनुष्य में शङ्काएँ उठ सकती हैं; परन्तु एक-एक करके उनका समाधान करना चाहिए।

× × ×

मनुष्य-योनि में भी हमको बहुतेरे पशु मिलते हैं। खाना, पीना तथा सन्तान उत्पन्न करना तो पशुओं में भी पाया जाता है। हमको इनसे ऊपर उठना है। हम न शरीर हैं, न मन, न अहङ्कार इत्यादि ही। हम इन सबसे ऊपर हैं—द्रष्टा हैं जो इन सबको देखता है। अतः हम इन सबसे पृथक् चिदानन्द-स्वरूप "शिवोहम्" हैं।

× × ×

अपने शरीर को ही लो। देखने वाला शरीर से अलग है। यह देखने वाला यद्यपि देह में है फिर भी देह से बिलकुल अलग है और सदा विद्यमान है। यही वास्तविक 'मैं' है। यही आत्मा है। अतः आत्मा पूरी सृष्टि में व्याप्त होते हुए भी उससे निर्लिप्त है। आत्मा नियन्त्रण और नियमन दोनों काम करता है।

× × ×

एक ही सत्य को ऋषियों ने अनेक नाम दिये हैं। वह सत्य केवल एक 'मैं' है। तुममें वह 'मैं' है क्या? वह केवल द्रष्टा है जो न तो शरीर है, न मन, न बुद्धि, न अहङ्कार ही। एकाएक उसका अनुभव हरएक नहीं कर सकता; परन्तु बुद्धिमान् को सहज में ही उसके निर्लिप्त अस्तित्व का विश्वास हो

जायगा। यद्यपि वह शरीर में है फिर भी निर्लिप्त है। इसको जानो और मुक्त हो जाओ।

× × ×

आखिर तुम हो क्या ? तुम शरीर नहीं हो, तुम न मन ही हो और न अहङ्कार ही। तुम इन सबसे ऊपर हो। एक सच्चे साक्षी हो, द्रष्टा हो।

× × ×

द्रष्टा और दृश्य कभी भी एक ही नहीं हो सकते। इसको समझने का प्रयास करो। तुम अपने शरीर को देखते हो, अतः तुम शरीर नहीं हो। तुम वह तत्त्व हो जो शरीर, मन इत्यादि सबको प्रकाश और चेतना प्रदान करता है। यद्यपि वह शरीर में स्थित है फिर भी शरीर से बिलकुल पृथक् है। इसी को आत्मा या 'मैं' कहते हैं। यही तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है।

× × ×

हमारा धर्म बड़ा विलक्षण है। वह एकमात्र सत्य को ही प्रधानता देता है जो आत्मा या ईश्वर ही है। अपनी प्रारम्भिक आयु से ही हम बिना जाने ही सत्य की ओर ले जाये जा रहे हैं। परन्तु इसके लिए बिना थोड़े प्रशिक्षण के कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। ब्रह्मचारी-जीवन उनमें बड़ा प्रशिक्षण है। व्यक्ति को अनेक प्रकार के कर्त्तव्य जीवित तथा मृतकों के हेतु करने पड़ते हैं।

मृत्यु से व्यक्ति का अस्तित्व नष्ट नहीं होता; केवल स्थूल शरीर ही नष्ट होता है जीव नहीं। इस जीवात्मा के उत्थान के हेतु पुत्र बहुत-कुछ कर सकते हैं; परन्तु पुत्र सच्चरित्र और

धार्मिक प्रवृत्ति के होने चाहिए। आध्यात्मिकता से तुम क्या समझते हो ? यह बड़ी भारी शक्ति है।

श्राद्ध वह है जो श्रद्धा से किया जाता है—उसके करने में सच्चा भाव और उत्साह होना चाहिए। श्राद्ध कैसे करना चाहिए इसकी विधि और रूप में मैं नहीं जा रहा हूँ। केवल उसके तत्त्व के विषय में यह कह रहा हूँ। ईसाई, मुसलमान इत्यादि सब ही ऐसा श्राद्ध किसी-न-किसी रीति से करते हैं। हमारे समस्त धार्मिक संस्कारों में गम्भीर अभिप्राय छिपा है। हमारे ऋषि मूर्ख नहीं थे। वे लोगों की उत्तरोत्तर उन्नति ही चाहते थे। परन्तु वर्त्तमान काल में भावना-रहित बाह्य आडम्बर मात्र रह गया है। पुरोहित लोग स्वयं इन पवित्र मन्त्रों का अर्थ नहीं जानते तो फिर वे दूसरों को क्या प्रकाश देंगे। अतः इन मन्त्रों के सार को—भावना को समझने का प्रयास करो।

× × ×

सत्य सब गुणों की माता है। सत्य का पालन करने से हमें सब गुण मिल जाते हैं। मन, वाणी और कर्म का एक ही सूत्र में बँधे रहना आवश्यक है। अर्थात् सत्य के द्वारा जो मन में सङ्कल्प उठे वही वाणी के द्वारा प्रकट हो और उसी के अनुसार आचरण हो तभी कल्याण है।

× × ×

सत्य की उपेक्षा कभी मत करो। सत्य का पालन करोगे तो वह तुम्हारी रक्षा करेगा।

× × ×

सत्य के अपरोक्ष ज्ञान से, जो कि हमारी आत्मा ही है, सारी शङ्काएँ पूर्ण रूप से नष्ट हो जाती हैं।

× × ×

यह जीवन बड़ा अमूल्य है। इसका उपयोग है सत्य को जानना और समझना। सत्य तो भगवान्—केवल भगवान् है।

× × ×

आँख खोल कर देखो। इस दुनिया में कौन-सी वस्तु शाश्वत है? कुछ भी नहीं। जो अब दीखता है वह क्षण मात्र में लुप्त हो जाता है। सभी परिवर्त्तनशील है। ऐसे नश्वर लौकिक विषयों के लिए अमूल्य जीवन व्यर्थ खोना क्या शोचनीय नहीं है? अतः उसको प्राप्त करने का प्रयत्न करो जो शाश्वत है।

× × ×

आँख खोल कर देखो। इस दुनिया में कौन-सी वस्तु है जिसके लिए लालसा हो? सब नश्वर—केवल नश्वर हैं। इन नश्वर वस्तुओं के प्राप्त करने में हम बड़ा परिश्रम करते हैं; किन्तु उनकी प्राप्ति के पहले ही या तो हम स्वयं नष्ट हो जाते हैं या वे वस्तुएँ ही नष्ट हो जाती हैं। सारा संसार मिथ्या, केवल मिथ्या ही है। अतः ऐसे तत्त्व की खोज करो जो अविनाशी है। उसको दृढ़ता से पकड़ो जिसमें जीवन सार्थक हो जाय। बहुत सो चुके। जागो, पश्चात्ताप करो। उसकी खोज करो जो शाश्वत और सत्य है। तुमको सब जगह कल्याण ही कल्याण का दर्शन हो!

× × ×

समस्त कष्टों का कारण यह है कि मनुष्य अपनी आत्मा

को शरीर से अभिन्न समझता है। निरन्तर विवेकपूर्ण विचार करके इस भ्रम को निर्मूल करना अति-आवश्यक है।

× × ×

आकाश किसी भी वस्तु से लेशमात्र भी प्रभावित नहीं होता चाहे कितनी भी तेज वर्षा हो; हिमपात, तेज गर्मी अथवा तूफान हो। आकाश से कई गुना सूक्ष्म चिदाकाश में स्वच्छन्द विचरते हुए आत्मा को शरीर-धर्म कोई भी बाधा नहीं पहुँचाता।

× × ×

जो वस्तु घर के अन्दर है उसको घर के बाहर दस हजार जन्म में भी ढूँढ़ोगे तो भी नहीं मिलेगी। दरवाजा खोल कर अन्दर जाओ। तुम्हें वह वस्तु तुरन्त मिल जायगी। मन को अन्तर्मुख करो।

× × ×

वह कौन-सी वस्तु है जो शाश्वत है? वह वस्तु हमारे अन्दर ही है; परन्तु हम उसको जानते ही नहीं। एक अमूल्य रत्न एक डिब्बे में बन्द करके सन्दूक में रखा है। डिब्बे और सन्दूक दोनों को अच्छी तरह ताला लगा कर सुरक्षित किया है। यह सन्दूक एक कमरे में बन्द है। कमरे में भी ताला लगा है। यह कमरा एक विशाल भवन में है। यह भवन चारों ओर से दीवार से घिरा हुआ है। इसके दरवाजे पर भी ताला लगा है। उस रत्न को ढूँढ़ने के लिए इस दीवार के बाहर कितने ही दिन घूमते रहोगे तो क्या मिलेगा? अन्दर जाने का प्रयास करना पड़ेगा। तभी उसे ढूँढ़ पाओगे।

× × ×

अपने को पहचानना ही सबसे बड़ा ज्ञान है। सर्वान्तर्यामी भगवान् हममें ही रहता है; परन्तु इस परम सत्य को हम जानते नहीं। जानने का प्रयास भी नहीं करते। 'मैं शरीर हूँ' ऐसा अभिमान करते हैं। परन्तु इस शरीर को चैतन्य और शक्ति देने वाला है कौन? इसके विषय में विचार तक नहीं करते। माया में डूबे रहते हैं।

× × ×

सम्पूर्ण जगत् स्वप्नमात्र है। स्वप्न में बहुत से दृश्य दीखते हैं जो जागने पर लुप्त हो जाते हैं। जैसे स्वप्न से जागते हो उसी प्रकार वर्त्तमान जाग्रतावस्था से जागो। तब केवल द्रष्टा ही शेष रह जायगा। सारा दृश्य जगत् लोप हो जायगा।

× × ×

विचार की सहायता से यह समझने का प्रयत्न करो कि क्या कोई ऐसा तत्त्व है जो निद्रा, स्वप्न तथा जाग्रत अर्थात् प्रत्येक स्थिति में निरन्तर तुम्हारे साथ रहता है और जो तुम्हारी प्रत्येक गतिविधि का सदा निरीक्षण करता रहता है।

× × ×

यह सत्य है कि हमको कोई नवीन वस्तु नहीं प्राप्त करनी है। तुम्हारी घड़ी तुम्हारी ही जेब में रखी हुई है; परन्तु तुम उसको भूल गये हो और उसको इधर-उधर खोज रहे हो। जिस समय तुमको उसका स्मरण आ जायगा तो तुमको उसके ढूँढ़ने की विकलता मिट जायगी। अतः यदि तुमने अपने को जान लिया तो तुमको सब-कुछ प्राप्त हो गया। योग के जो भी मार्ग हैं वे तुमको उसी स्थान पर ले जाने के साधन हैं। बिना पुरुषार्थ के कुछ प्राप्त नहीं हो सकता। आत्मा की प्राप्ति दुर्बल

प्राणियों के वश की बात नहीं है। व्यक्ति को बलिष्ठ बनना पड़ेगा। इसके लिए भी संयम की आवश्यकता है। गीता, उपनिषद् आदि का अध्ययन करो। अच्छा जीवन बिताओ।

× × ×

तुम अपने को जान लो तो तुमने सब-कुछ जान लिया। ज्ञान से मनुष्य पूरी तरह से मुक्त हो जाता है जबकि अज्ञान बन्धन में फँसाता है।

× × ×

वास्तव में जीवित वही है जो कम-से-कम जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु—सत्य के ज्ञान हेतु—अपनी पूरी शक्ति से चेष्टा करता है; भगवान् से—अपने आपमें—स्वात्मा और परमात्मा में योग स्थापित करता है। अन्य सबकी स्थिति मात्र है। धनी और शक्तिशाली व्यक्ति इस विषय पर रञ्च-मात्र भी ध्यान नहीं देते। वे माया में पूर्णतः डूबे रहते हैं।

× × ×

हे मानव! तू क्या खोज रहा है? तू आनन्द खोज रहा है न? तो यह समझ ले कि वह न तो स्त्री में है, न धन में और न किसी अन्य बाह्य वस्तु में ही है। इनमें आनन्द खोज कर अपने जीवन को नष्ट मत कर। आनन्द तेरे भीतर ही रहता है। भीतर देख। तुझे वहाँ ही पूर्ण आनन्द मिलेगा।

× × ×

सब लोग क्या आनन्द ही नहीं खोजते? यह आनन्द है कहाँ और कैसे प्राप्त होगा? ज्ञान न होने के कारण लोग मिथ्या लौकिक सुख की खोज में भटक कर अपना जीवन नष्ट कर देते हैं। कितने दुःख की बात है!

× × ×

तुम अपने महत्त्व की जानो। तुम स्वयं अपने ही महत्त्व को नहीं जानोगे तो तुम दूसरों के और सर्वोपरि उस भगवान् के महत्त्व को—जो कि सर्वेश्वर है—कैसे जान सकोगे ?

× × ×

सत्य अर्थात् अपनी आत्मा का साक्षात्कार हो जाने पर ही सारी शङ्काएँ पूरी तरह से नष्ट हो जायेंगी।

●

सद्गुरु तथा शिष्य

ईश्वर-दर्शन की लालसा होने पर भी मार्ग-दर्शक के बिना यह इच्छा सफल न होगी। सन्तजन ही मार्ग-दर्शक हैं। इसलिए उनकी निष्कपट भाव, प्रेम तथा भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। उनकी कृपा हो जाने पर सभी अभीष्ट मिल जाता है।

× × ×

गुरुपूर्णिमा के पर्व पर हम गुरुदेव से सहायता और पथ-प्रदर्शन के लिए विशेष रूप से प्रार्थना करते हैं। इसलिए एक तिथि इसके लिए निर्धारित है। यह एक बड़ा पर्व है। श्री व्यास हिन्दुओं के परम गुरु हैं। अतः हम सबको उन व्यास जी के प्रतिनिधि अपने सद्गुरु से बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ प्रार्थना करनी चाहिए कि वे हमें असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, और मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलें। हरि ॐ॥

× × ×

सद्गुरु की थोड़ी-सी भी कृपा से असाध्य साध्य हो जाता है।

× × ×

यदि किसी को आध्यात्म-साधना में सच्ची लगन हो और योग्य मार्गदर्शक की अत्यन्त आवश्यकता हो तो उसे अवश्य ही उपयुक्त व्यक्ति मिल जायगा। यह सारा विधान भगवान् का है। भगवान् इतना करुणामय और कोमल है। उसको प्राप्त करने की लालसा करो और उसके योग्य बनो। जब किसी को एक योग्य मार्गदर्शक मिल जायगा तो उसे दूसरे को खोजने की इच्छा नहीं रहेगी।

× × ×

यदि किसी विद्यार्थी को सादा जोड़ लगाना न आता हो तो क्या उसे भाग देना सिखाया जा सकता है ? क्या एक ही छलाँग में उस उच्चातिउच्च सत्य तक पहुँचा जा सकता है जो मन और वाणी से परे है ? ऐसा कोई भी नहीं है जो तुमको यह तुरन्त सिखा सके। वह तुमको तुम्हारे अनुकूल कोई एक मार्ग बता सकता है जिस पर तुमको चलना है।

× × ×

गुरु लोग भिन्न-भिन्न साधकों को भिन्न-भिन्न मार्ग बताते हैं जो कि उनकी मानसिक स्थिति के अनुकूल हों। सबके लिए एक ही मार्ग नहीं होता। यदि वे साधक महापुरुषों के बताये किसी भी मार्ग पर चलें तो वे अपने लक्ष्य पर अवश्य

पहुँच जायेंगे। गीता का पन्दरहवाँ अध्याय पढ़ो। वह ईश्वर-भक्ति का लक्ष्य है।

× × ×

वे लोग भाग्यवान् हैं जिनको गुरु-चरणों में बैठने का गौरव प्राप्त है; क्योंकि यदि उनको सद्गुरु की प्राप्ति हो जाय और वे तन-मन से उनकी सेवा करने लगें तो वे अपना सारा बोझा उन पर (गुरु पर) डाल देते हैं; परन्तु सेवा सच्ची, विशुद्ध और निश्छल होनी चाहिए। अन्यथा कितने ही दीर्घकाल तक सेवा करते रहने पर भी तुम अनुभव करोगे कि तुम सेवा के अनुपात में प्रगति नहीं कर रहे हो। निःसन्देह तुम थोड़ी प्रगति करोगे; परन्तु इससे होगा क्या ?

परन्तु यदि तुमने एक बार अपने हृदय के सारे द्वार उनके सामने खोल दिये और कुछ भी गुप्त या छिपा कर नहीं रखा तो वाह ! तुमको फिर कुछ करना ही न रहेगा। तुम उसी क्षण मुक्त हो जाओगे।

सूर्य केवल उसी कमरे को प्रकाशित करता है जो पूरी तरह से खुला हो। वह उस कमरे को कैसे प्रकाश दे सकता है जिसमें उसकी किरणें जा ही नहीं सकतीं। इसी कारण से महापुरुषों ने 'अमाया' सेवा—पूरे मन से, बिना किसी प्रकार के दोष, पक्षपात तथा पाखण्ड की सेवा—पर बड़ा जोर दिया है।

और गुरु है कौन ? केवल वही जो सदैव प्रकाश में रहता है, पूर्ण शङ्का-रहित है, जीवन-मरण की बड़ी समस्या को सदा के लिए हल कर चुका है और शाश्वत सत्य का साक्षात्कार कर चुका है। वह मानवता से परे उठ चुका है चाहे देखने

में वह एक साधारण मनुष्य ही प्रतीत होता हो; क्योंकि वह सभी प्रकार के कार्य करता रहता है। परन्तु ध्यान रहे कि यह सब कार्य वह अपने लिए नहीं करता बल्कि संसार के प्रति सहानुभूति के कारण उसकी आन्तरिक चेतना उसको यह सब करने के लिए प्रेरित करती है। उसका इससे न लाभ ही है और न हानि। वह तो सदा के लिए बन्धन-मुक्त है ही। वह तो भगवान् या ब्रह्म हो चुका है। विचार करो कि ऐसे वास्तविक भगवत्स्वरूप गुरु का शिष्य होना कितने सौभाग्य की बात है ! परन्तु सावधान ! 'वास्तविक' शब्द पर विशेष ध्यान रखना। ऐसा शिष्य खाते, पीते, चलते, फिरते तथा खेलते, यहाँ तक कि निद्रा में भी, अपने गुरु से सम्पर्क बनाये रखता है। शिष्य अपने गुरु को पूरी तरह से समझने और उनके गुण अच्छी तरह जानने की स्थिति में नहीं होता। इसकी कोई चिन्ता नहीं कि यदि तुम्हारा किसी विषय या किन्हीं विषयों में गुरु से मतान्तर हो, यहाँ तक कि तुमको उनका विरोध भी करना पड़े; परन्तु ऐसा विरोध सद्भावपूर्ण होना चाहिए। गुरु बड़े दयालु होते हैं। वे इससे अप्रसन्न नहीं होते वरन् अपने शिष्य में गुणों को विकसित होते देख कर अधिक प्रसन्न होते हैं और उसको आगे बढ़ाने का प्रयास करते हैं। वीर अर्जुन ने भगवान् शङ्कर का विरोध किया और उसके फलस्वरूप महान् धनुष प्राप्त किया। इस प्रकार बिना जाने सतत और स्थिरतापूर्वक अपने में परिवर्त्तन लाता हुआ शिष्य धीरे-धीरे अपने गुरु के समान रूप और आकार धारण करता हुआ ह्यस्वरूप बन जाता है।

●

श्रद्धा और विश्वास

सब कार्यों को श्रद्धा से करो; क्योंकि व्यक्ति का उत्थान या पतन उसकी श्रद्धा पर निर्भर है। श्रद्धा के उपासक का कभी पतन नहीं होता; परन्तु श्रद्धाहीन का पतन होता ही चला जाता है। उसका जीवन निष्फल हो जाता है। जन्म सार्थक बनाने के लिए श्रद्धा अत्यावश्यक है।

× × ×

क्या तुमको ईश्वर में विश्वास है? वह सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ और दया से परिपूर्ण है। तुम्हारी सारी आवश्यकताओं को वह पूरा करेगा। परन्तु तुम श्रद्धा और सच्चे हृदय से उससे प्रार्थना करो। ऐसी प्रार्थना के लिए तुममें आवश्यक योग्यता होनी चाहिए।

× × ×

सर्वशक्तिमान् भगवान् सदा हमारे कल्याण का ध्यान रखता है; परन्तु हम ही इधर-उधर दौड़ते फिरते हैं। यदि हम केवल उसमें विश्वास रखें और प्रार्थना करें तो हम सब-कुछ प्राप्त कर लेंगे।

× × ×

Slow and steady wins the race यह एक अंग्रेजी कहावत है। मन्दगति वाला भी सतत प्रयत्न से सफलता प्राप्त कर लेता है। भगवान् में विश्वास रखो। वह तुम्हारे लिए

सब-कुछ करेगा जसे कि वह पहले और अब भी हर तरह से तुम्हारी रक्षा कर रहा है। उसकी करुणा पर सन्देह मत करो। उससे प्रार्थना करते रहो—बारम्बार प्रार्थना करते रहो।

× × ×

तुम केवल भगवान् पर भरोसा रख कर अपना कर्त्तव्य करो।

× × ×

श्रद्धा एक महान् गुण है। यह मनुष्य को ऊपर ही उठाती जाती है। इसके अभाव में पतन होता है। हमको अपने सारे कर्त्तव्यों को श्रद्धा से करना चाहिए। भारत में जो पतन और गरीबी देखने में आती है उसका मुख्य कारण श्रद्धा का अभाव ही है।

× × ×

अपनी उन्नति की इच्छा को अपने अन्तर हृदय में बराबर बनाये रहो। इस इच्छा को प्रधान स्थान दो। समय आने पर सब ठीक हो जायगा।

× × ×

विकसित होते जाओ। प्रसार ही जीवन है।

× × ×

भगवान् में ही निवास करो। इसके अतिरिक्त तुम सहायता की आशा किससे कर सकते हो? ऐसा करने से दूसरे सभी विचार स्वयं दूर हो जायेंगे।

× × ×

कोई भी काम असाध्य नहीं है। व्यक्ति को ईश्वर में विश्वास होना चाहिए और सतत प्रयत्न करना चाहिए। तब कोई भी वस्तु प्राप्त हो सकती है। ईश्वर ऐसा दयालु और अन्तर्यामी भी है। दृढ़ विश्वास से प्रयत्न करो। तब सब-कुछ साध्य हो जायगा।

× × ×

तुम मेरे हृदय को जानते हो। आगे बढ़ते जाओ। भगवान् तुम्हारी आवश्यकताओं का स्वयं प्रबन्ध करेगा। अभीप्सा को तीव्र और निष्कपट बनाओ। ऐसी अभीप्सा ही तुम्हें भगवान् के चरणारविन्दों में पहुँचा देगी।

× × ×

भगवान्-जगदाधार—में तीव्र श्रद्धा एवं विश्वास रखो। वही प्रत्येक वस्तु का नियन्त्रण और नियमन करता है। हम सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेते हैं इसलिए दुःख भोगते हैं। पर हम आखिर कर ही क्या सकते हैं? हमारे माध्यम से सब-कुछ वही तो करता है।

× × ×

तुलसीदास जी को समझने की कोशिश करो और प्रभु के चरणों में वैसी ही अद्भुत श्रद्धा रखो। श्रद्धा में अद्भुत चमत्कार है। राम जी को उनके घर की रखवाली करनी पड़ी। यह बिलकुल सत्य है। सब-कुछ व्यक्ति की अपने चित्त की ही कल्पना है। तुलसीदास जी की रामायण है क्या? वह वेदों की ही व्याख्या है।

× × ×

किसी को जब किसी खास युवक या युवती से आसक्ति हो जाती है तो वह केवल उसी का सदैव विचार करता रहता है—खाते, पीते, काम करते तथा सोते समय भी। वे बड़े भाग्यशाली हैं जिनका मन भगवान् की ओर इसी तरह आसक्त हो जाता है। उनके विषय में यह माना जा सकता है कि उनको जो प्राप्त हो सकता था वह प्राप्त कर चुके।

× × ×

तुम कष्ट इसलिए भोगते हो; क्योंकि तुमको भगवान् पर विश्वास नहीं है। तुम्हारों कष्टों का यही कारण है। "सर्वधर्मान्परित्यज्य"। केवल उसकी ही शरण में जाओ और उसका ही चिन्तन करो। सच्चे और निष्कपट बनो। तुम उत्तरोत्तर उन्नति करते जाओगे अन्यथा पाखण्डी बनोगे और नीचे गिरते चले जाओगे।

× × ×

"त्वमेव माता च पिता त्वमेव।
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव॥
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव।
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥"

इसमें दृढ़ विश्वास रखो तो तुम्हारी सारी आवश्यकताएँ वह कृपालु भगवान् समय पर पूरी करेगा। चिन्ता या डर के लिए कोई स्थान नहीं रहेगा। निर्भय और चिन्तामुक्त जीवन बिता सकोगे।

× × ×

प्रभु स्वयं ही तुम्हारी देखभाल करने वाला है। उसकी प्रचुर करुणा में तीव्र विश्वास रखो। केवल उसको भूलो मत। अपनी सहायता और मार्गदर्शन के लिए केवल उसी की ओर देखो।

× × ×

भगवान् तुम्हारे लिए सब-कुछ कर रहा है। इसको तुम अब जानने लगे हो। जैसे-जैसे तुम इसका अधिकाधिक अनुभव करते जाओगे वैसे-वैसे इस अनुभव के अनुरूप तुम्हारा भगवान् में विश्वास भी बढ़ता जायगा।

●

प्रेम और भक्ति

जब मनुष्य की अभीप्सा तीव्र हो जाती है तो उसका कार्य सिद्ध हो जाता है। तुलसीदास जी के शब्दों में

"कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर, प्रिय लागहु मोहि राम॥"

यदि मनुष्य सत्यनिष्ठा से इसकी लालसा करे तो उसे इसकी प्राप्ति उसी तरह हो जायगी जैसे कि गङ्गा जी पर्वतों की विशाल चट्टानों में से रास्ता बना कर सीधी समुद्र में जा कर मिल जाती हैं। ऐसी ही तीव्र अभीप्सा, जिसमें भौतिक इच्छाएँ न हों, मनुष्य को तुरन्त सीधे आनन्द के सागर—प्रभु के पास पहुँचा देगी। हमारा कर्त्तव्य है कि हम

प्रभु को प्राप्त करने की उत्कण्ठा को तीव्र करें। जागरूक रहो और प्रार्थना करो।

× × ×

तुम्हारा मार्ग भक्ति है। भगवान् में अपनी भक्ति तीव्र करो और मुक्त हो जाओ। केवल वही जानता है कि हमारे लिए सर्वोत्तम क्या है। भगवान् न करे कि नरक मिले, परन्तु यदि तुम्हें नरक भी दे तो सहर्ष स्वीकार करो। यदि तुम उसके प्रति विशुद्ध प्रेम की लौ लगाये रहोगे तो नरक भी तुम्हारे लिए स्वर्ग से बढ़ कर हो जायगा।

"मो सम दीन न दीन हित तुम समान रघुवीर।
अस विचारि रघुवंश मनि हरहु विषम भव भीर॥"

रामायण के इस दोहे के भाव को आत्मसात् करो।

× × ×

एक पाँच वर्ष के बालक ने अपनी माता से सोते समय कहा कि माँ जब मुझे भूख लगे तब मुझे जगा देना। माता ने उत्तर दिया कि बेटा तेरी भूख तुझे अपने-आप जगा देगी। यदि किसी को जगदम्बा के दर्शन की तीव्र लालसा होगी तो उसकी यह लालसा ही उसे उसके पास तक पहुँचा देगी। हमारा कर्त्तव्य इस लालसा को तीव्र बनाना है। हवा को पात्र से बाहर निकालो पानी उसमें तेजी से भर जायगा। अतः भौतिक वासनाओं तथा प्रवृत्तियों को अपने बाहर निकालो। आत्मगुण तुम्हारे मन में तीव्रता से प्रवेश कर जायेंगे।

× × ×

प्रेम शुद्ध और दिव्य है। वे भाग्यशाली हैं जो प्रेम कर सकते हैं। जब किसी में शुद्ध प्रेम स्थान पा जाता है तो वह

उसके सब अवगुण नष्ट कर देता है और शान्ति और स्थिरता से भगवत्तत्त्व की ओर ले जाता है जो कि प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है।

× × ×

भक्ति क्या है ? अन्य सब भूल जाओ—भूल जाओ। तब तुम केवल एक ही बात याद रखोगे। सम्पूर्ण विचार केवल भगवच्चिन्तन में ही लगा रहे। कोई दूसरा विचार—स्त्री, सन्तान, ख्याति इत्यादि का—न हो। गोपियों ने अपने ही शरीर को, अपने बच्चों को, गायों इत्यादि को भुला दिया था। उसमें केवल एक श्रीकृष्ण की ही स्मृति बची थी।

× × ×

भगवान् महान् है। चाहे वन हो या मैदान वही सब-कुछ करने वाला है। उसके प्रति अपनी भक्ति तीव्र करो। साधना के पन्थों में ही थोड़ा अन्तर है। सभी महापुरुष मन और इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण करने पर विशेष बल देते हैं जो कि ईश्वर-कृपा से तीव्र वैराग्य—त्याग की चित्तवृत्ति से ही प्राप्त हो सकता है।

× × ×

भगवान् के लिए प्रबल भूख और प्यास होनी चाहिए। जब एक बार क्षुधा जाग्रत हो जाय तो मनुष्य भगवान् के पीछे दौड़ता फिरेगा। जो लोग यह समझ बैठे हैं कि संसार ही सब-कुछ है, उनके पास भगवान् के लिए कोई स्थान नहीं रहता। तथाकथित सांसारिक सुख और आनन्द स्वभावतः क्षणिक हैं। तुम यह जानने का प्रयास करो कि इस सांसारिक सुख और आनन्द से भी अधिक आनन्द क्या कहीं है ? यदि

तुम सच्ची निष्ठा से इसकी खोज करो तो तुम आनन्द और सुख के उद्गम स्थान—अपनी आत्मा तक—भगवान् तक पहुँच जाओगे। तब उसको भूलने की शक्ति न रहेगी।

× × ×

भगवान् को पकड़ने का सबसे श्रेष्ठ साधन प्रेम है। भगवान् भक्त के हृदय में भक्ति की डोरी से बँधे हुए हैं ऐसा कहा जा सकता है।

× × ×

तुलसीदास जी की रामायण के स्तोत्र ईश्वर-प्रेरणा से भरे हुए हैं। यदि तुम उनको उत्साह और नियमित रूप से अपनाओगे तो तुमको भक्ति और ज्ञान दोनों ही प्राप्त होंगे।

× × ×

अब तुमको भगवान् का हाथ धीरे-धीरे दीखने लगा है। उसकी ही शक्ति हमसे सब काम कराती है। यदि कोई पूर्ण दृढ़ता से इस सत्य में प्रतिष्ठित हो जाय तो मुक्त हो जाय। उसको फिर कुछ करना ही न रहेगा। पापासक्त और दूषित विचारों के लिए उसके मन में कोई स्थान ही नहीं रहेगा। अतः उस प्रभु के प्रति अधिकाधिक भक्ति करने का प्रयास करना चाहिए। यह भगवच्चर्चा, आध्यात्मिक पुस्तकों का अध्ययन, नाम-स्मरण, अर्चना इत्यादि से प्राप्त होगा।

× × ×

सच्चा आनन्द तुमको केवल भगवान् के चरणकमलों की भक्ति से ही प्राप्त हो सकता है।

× × ×

धर्म की परिभाषा है अपने को भगवान् के योग्य बनाना और वैसा ही हो जाना—(*Being and becoming is religion*)। केवल बात करते रहने से कुछ नहीं होगा। महापुरुषों से अच्छे गुणों को ग्रहण करो और उनको अपने जीवन में उतारो। 'मैं भी पवित्रता और भक्ति में श्री रामकृष्ण परमहंस देव की तरह होना चाहता हूँ' इस तरह की भावना अपनाओ। तुमको अपने-आप अनुभव होगा। चिरकाल में तुम भी उन्हीं की तरह हो जाओगे। अतः ज्यादा बात मत करो। निरन्तर पुरुषार्थ करते जाओ। तुमको अपने में अन्तर —अपने में परिवर्त्तन—स्वयं अनुभव होगा।

× × ×

"भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥"

भगवान् कृष्ण ने कहा है कि भक्ति से व्यक्ति मुझको तत्त्व से भली प्रकार जान कर मेरे स्वरूप और महिमा का ज्ञान प्राप्त करता है। तब वह 'एकमेवाद्वितीयम्'—एक ही है दूसरा नहीं इस स्थिति में पहुँच जाता है।

× × ×

जप, पूजा हवन इत्यादि की उपेक्षा मत करो। प्रभु-चरणों की प्राप्ति की उत्कट अभीप्सा निरन्तर बनाये रखो।

× × ×

भगवान् तुम्हारे लिए सब-कुछ कर रहा है। उसने तुम्हारा जो भला किया है उस पर विचार करो और उसका अनुग्रह मानो। शङ्का करने की आवश्यकता नहीं है। उसकी इच्छा पूर्ण हो।

× × ×

संसार बड़ा विलक्षण है। भगवान् की कृपा से ही हम शान्तिमय जीवन निर्वाह कर सकते हैं।

× × ×

प्रेम से—केवल विशुद्ध प्रेम से—सबको जीतो।

× × ×

तुम्हारे पूजा, जप, ध्यान और अन्य कर्मों का भी उद्देश्य भगवान् के प्रति विशुद्ध प्रेम प्राप्त करना ही होना चाहिए।

× × ×

शान्त, मधुर, वात्सल्य, सख्य तथा दास्य ये पाँच प्रकार की भक्ति हैं। जिस भक्ति में रोना, हँसना, नाचना, जोर से गाना इत्यादि व्यक्ति अपने अन्दर रोक कर भीतर ही भीतर उसी तरह आनन्द का अनुभव करता है जैसे कि ज्ञानी अपने ज्ञान को अपने अन्दर रखता है उसको शान्त भक्ति कहते हैं। वसुदेव तथा देवकी को जो श्रीकृष्ण से प्रेम था वह वात्सल्य भक्ति है। हनुमान को राम के प्रति जो भक्ति थी वह दास्य भक्ति है। अर्जुन को श्रीकृष्ण से जो भक्ति थी वही सख्य भक्ति है। गोपियों को श्रीकृष्ण से जो भक्ति थी वह माधुरी—माधुर्य-भाव भक्ति है।

× × ×

भगवान् के पदारविन्दों में अपने प्रेम को तीव्र करो। दूसरों को भी ऐसे प्रेम की शिक्षा दो। इससे तुम शान्त और आनन्दमय जीवन प्राप्त कर सकोगे।

× × ×

भगवान् से प्रेम करना आरम्भ कर दो। तुम्हारे सब अशुभ भाग जायेंगे। भगवान् तुमको विशुद्ध प्रेम प्रदान करे!

प्रेम दैवी सम्पदा है। प्रेम बढ़ाओ और परस्पर मित्र-भाव रखो। आगे बढ़ते चलो।

× × ×

सच्ची भूख वाला व्यक्ति तब तक सन्तुष्ट नहीं होगा जब तक उसे भोजन न प्राप्त हो जाय।

× × ×

तुम्हारा मार्ग भक्ति-मार्ग है। स्वाध्याय और सत्सङ्ग से भक्तिभाव को पुष्ट करो। सबसे प्रेम करना शुरू करो। प्रेम दिव्य है। नम्र और विनीत बनने का प्रयास करो। भगवान् तुम्हारा कल्याण करे!

× × ×

भगवान् के चिन्तन में सदा आनन्दमग्न और प्रफुल्लित रहो।

× × ×

वे लोग भाग्यशाली हैं जो भगवान् से प्रेम करते हैं। वे स्थान को पवित्र बना देते हैं।

× × ×

प्रेम पारस्परिक (*Reciprocal*) होता है। क्रिया की प्रतिक्रिया और ध्वनि की प्रतिध्वनि जैसे होती है वैसे ही तुम्हारे प्रेम की प्रतिक्रिया-रूप ही मेरा प्रेम तुम्हारे प्रति है।

× × ×

प्रेम करो, प्रेम करो। यह दिव्य है। किसी के प्रति भी हृदय में द्वेष और घृणा के लिए स्थान न रहे।

× × ×

ईश्वर प्रेम-स्वरूप है। अतः सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करो। प्रेम से हमारा मन विस्तृत होता है। विस्तृत होते-होते वह विश्व से ऐक्य-भाव प्राप्त कराता है। राग-द्वेष का पूर्णरूपेण नाश होकर मन भगवान् का धाम बन जाता है।

× × ×

भक्ति-मार्ग तुम्हारे लिए सर्वोत्तम पथ है। भगवान् में अपनी भक्ति बढ़ाते जाने का प्रयास करो।

× × ×

मैं जानता हूँ कि तुम्हारा प्रेम बहुत तीव्र हो गया है। यह बहुत अच्छा है। इससे तुम्हें तुच्छ भौतिक वस्तुओं से अनासक्त होने में बहुत सहायता मिलेगी।

× × ×

प्रेम! प्रेम! प्रेम! मैं तुम्हें इसकी वसीयत करता हूँ।

●

समर्पण

यदि तुम अपने-आपको भगवान् के चरणों में पूरी तरह से समर्पित कर दो तो तुम पूरी तरह से मुक्त हो जाओगे, पूरी तरह से दुःख-रहित हो जाओगे।

× × ×

परन्तु व्यक्ति समर्पण करे कैसे जबकि उसको यह ज्ञान ही नहीं है कि भगवान् कौन अथवा कैसा है और जब तक वह उत्तरदायित्व छोड़ने का इच्छुक न हो। इसलिए भगवान् को

अधिकाधिक समझने का प्रयास करो। तुमको त्याग की भावना प्राप्त होगी।

× × ×

भगवान् सबके हृदय में विराजमान है, केवल बद्रीनाथ में ही नहीं। यदि तुम ध्यान के द्वारा अधिकाधिक अन्तर्मुखी होते जाओ तो तुम उससे सम्पर्क स्थापित कर सकते हो जिससे तुमको बहुत आनन्द प्राप्त होगा। इससे तुम सांसारिक बन्धनों से, सांसारिक प्रीति से छूट जाओगे। तब शनैः शनैः तुम आत्म-समर्पण कर सकोगे।

× × ×

प्रभु को आत्म-समर्पण करो और मुक्त हो जाओ।

× × ×

भगवान् की लीला रहस्यमय है। हमको केवल अपने को उसकी इच्छा के अधीन करना है; साथ ही साथ अपने कर्त्तव्य को अच्छी रीति से निभाते रहना है।

× × ×

यदि हम अपने-आपको सत्य और निष्कपट भाव से प्रभु को पूर्णतया समर्पित कर दें तो हमारा पथ सरल हो जायगा। प्रभु सचमुच ही बड़ा वात्सल्यमय पिता है और यदि हम सच्चे और निष्कपट हों तो प्रभु हमारी सारी आवश्यकताओं को पूरा करेगा और हम जन्म-मरण से मुक्त हो जायेंगे।

× × ×

तुम मनोबली बनो। यदि तुम सारे ऐश्वर्य अथवा विपत्ति में भी समान रूप से शान्त रह कर परिस्थिति को झेल सको तो यह भी एक बड़ी तपस्या है। भगवान् का स्मरण

करो। वही स्वामी है, वही रक्षक है। यदि तुम उससे विनती करोगे तो वह तुम्हारी देखभाल करेगा यह ध्रुव-सत्य है। इस पर पूरा विश्वास रखो। ये सब तुम्हारे लिए श्रेष्ठ शिक्षा है या यों कहें कि तुम्हारी परीक्षा है।

× × ×

सब-कुछ भगवान् के हाथ में है। हम मूर्ख हैं कि सारा उत्तरदायित्व अपने ही ऊपर ले लेते हैं। इसीलिए हम चिन्ता, क्लेश और आपदा उठाते हैं।

●

सत्सङ्ग

माननीय सत्पुरुषों का आदर करो। उनकी सेवा करो। उनके सङ्ग के लिए उत्सुक रहो। तुम्हें निरन्तर सद्गुण प्राप्त होते रहेंगे। दुःसङ्ग तुम्हारे सारे गुणों को नष्ट कर देगा। अतः सावधान रहो।

× × ×

सज्जनों के समागम से हमें बड़ा लाभ मिलता है। दुर्जनों के सङ्ग से हम गड्ढे में गिरते हैं। इसलिए सदा सज्जनों का सङ्ग करने का प्रयास करो।

× × ×

पुण्यात्माओं का साथ करो। तुम लोग भी पुण्यात्मा बन जाओगे। पापियों का सङ्ग करोगे तो तुम्हारे जो भी गुण हैं वे भी नष्ट हो जायेंगे और तुम भी दुष्ट बन जाओगे।

× × ×

सङ्ग सज्जन लोगों का करो। दुर्जनों के सङ्ग में पड़ जाओगे तो सब-कुछ खो दोगे—नष्ट हो जाओगे।

× × ×

आलस्य एक बड़ा रोग है। इससे परिवार का विनाश हो जायगा। यदि तुम भगवान् का निरन्तर स्मरण करते हुए उत्साह से अपना कर्त्तव्य करते रहो तो तुम्हारा जीवन धन्य हो जायगा।

× × ×

आध्यात्मिक जीवन के लिए सत्सङ्ग उसी तरह बहुत आवश्यक है जैसे प्राणी के लिए प्राण-वायु है। हम ऊँचे हैं या नीचे यह विचार व्यर्थ है। भगवान् के ऐश्वर्ययुक्त महल की एक झलक भी परम सन्तोषदायक है।

× × ×

महात्मा गान्धी की आत्मकथा नित्यप्रति पढ़ो। यदि तुम उसका कुछ महत्त्व और अभिप्राय समझोगे तो तुम वास्तव में मनुष्य बन जाओगे। तुम दूसरों के लिए भी मिसाल बनो।

× × ×

यदि कोई सच्चे महापुरुषों का सम्पर्क और सेवा करता रहे तो वह निश्चय ही सब-कुछ प्राप्त कर लेगा। अतः तुमको जब भी अवसर मिले, ऐसे सत्सङ्ग का लाभ उठाओ। तुम स्वयं अनुभव करोगे कि तुम उत्तरोत्तर पवित्र और शक्तिसम्पन्न होते जा रहे हो।

× × ×

गुण जहाँ से भी मिले ग्रहण करना चाहिए।

× × ×

अच्छी पुस्तकें पढ़ो और सन्तों का सङ्ग करो और सुखी बनो।

× × ×

मुझे हर्ष है कि तुम लोग सत्सङ्ग का आनन्द ले रहे हो। सत्सङ्ग से निःसङ्ग सधता है।

× × ×

तुम अनेक लोगों से मिलते हो; यह अच्छा है। उन सबसे अच्छे गुण ग्रहण करो।

× × ×

जिनको भूख नहीं है उनको भोजन देने से रोग ही होगा। सांसारिक विषयों में लिप्त व्यक्ति को अध्यात्म-तथ्यों का उपदेश न देना ही अच्छा है।

× × ×

भौतिक सुख में ही डूबे रहने से यह श्रेष्ठ मनुष्य-जन्म व्यर्थ जायगा। संसार-सागर के उस पार जाने के लिए मनुष्य-शरीर एक नाव है। सदाचार का अभ्यास करो। दुराचार का पूरी तरह से त्याग करो। सदा धार्मिक लोगों का सङ्ग और उनकी सेवा करो। सद्ग्रन्थों का अध्ययन करो। ज्ञान तथा वैराग्य के द्वारा इस संसार-सागर को पार करो।

सेवा

अशक्त और निराश्रय व्यक्तियों की हर प्रकार की सेवा करने के लिए सदा तत्पर रहो। वास्तव में पीड़ित लोगों की सेवा से बढ़ कर ईश्वर-पूजा कोई है ही नहीं।

× × ×

अपने पूज्य माता तथा पिता की सेवा करो। उनकी सेवा करना वास्तव में आनन्द और गौरव की बात है भले ही तुम इसका अनुभव अभी न कर सको।

× × ×

"मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव।" व्यक्ति को अपने माता, पिता, आचार्य और अतिथियों की भक्ति-भाव से सेवा और पूजा करनी चाहिए। उन लोगों के निर्देशों को नम्रता और प्रसन्नता से पूरा करना चाहिए।

× × ×

तुम अपने दोषों और त्रुटियों से अनभिज्ञ नहीं हो, यह जान कर मुझे प्रसन्नता हुई। सदा एक सेवक का भाव रखो जो सेवा करने का इच्छुक है—जो मानव की दीन-भाव से हर प्रकार से सेवा करने का अवसर चाहता है। तुम्हें अत्यन्त हर्षित और गौरवान्वित होना चाहिए कि तुम्हें विभिन्न प्रकार से अपने मानव भाइयों की सेवा करने का शानदार अवसर मिला है इसके लिए भगवान् का आभार मानो और इस अवसर को सच्ची निष्ठा से ग्रहण करो।

× × ×

दूसरों की सहायता करने के लिए सदा तैयार रहो। इसके लिए अवसर ढूँढ़ने जाने की आवश्यकता नहीं है। जब तुम्हें ऐसा अवसर मिले तो चूकना नहीं चाहिए वरन् उसका अच्छी तरह उपयोग करना चाहिए। उसका लोगों में विज्ञापन नहीं करना चाहिए।

× × ×

दूसरों का उपकार करके लोग अपनी शेखी बघारते हैं। होना ऐसा चाहिए कि जिसे सहायता मिले उसे बाद में भी कोई दुःख न हो। यही सच्चा परोपकार है।

× × ×

सङ्कट में पड़े हुए व्यक्ति की जैसे भी हो सके सहायता करने के लिए सदा तत्पर रहो।

× × ×

दीन-दुःखियों पर निरन्तर सहानुभूति रखो। ऐसा भाव ही मनुष्य को वास्तव में महान् बना देता है। विशुद्ध प्रेम के फल-स्वरूप ही यह भाव प्राप्त होता है। जो व्यक्ति भगवान् से प्रेम करता है वह उसकी सृष्टि से प्रेम किये बिना नहीं रह सकता।

× × ×

उठो! जागो! जो वास्तव में महान् आत्माएँ हैं उनकी सेवा करो और सत्य को समझो। वसिष्ठ गुहा से यही सन्देश है।

× × ×

इसका स्मरण रखो कि हमारे पास जो-कुछ भी है चाहे विद्या धन अथवा और कोई वस्तु—ये सब एकमात्र हमारे स्वार्थपूर्ण उपभोग के लिए नहीं हैं। हमको दूसरों को भी इन

चीजों का सहभोगी बनाना चाहिए। यदि हम दूसरों को दिये बिना अकेले अपने-आप ही उपभोग करेंगे तो महान् पाप होगा। हमारा क्षेत्र निरन्तर बढ़ते और विस्तृत होते-होते सारा विश्व ही हमारा परिवार हो जाय।

× × ×

मन, वचन अथवा कर्म से किसी को भी हानि मत पहुँचाओ। सबके प्रति सद्भावना रखो। पात्र देख कर यथाशक्ति दान दो।

× × ×

यदि तुम भिक्षुक को दान देने की स्थिति में हो तो बड़ी नम्रता और भक्ति से दो।

× × ×

जरूरतमन्द, दीन और सच्चे आदमी की सेवा करो। यह तुम सबके लिए जन्मदिन का सन्देश है। ऐसे व्यक्ति की हर प्रकार से सहायता करो।

मन

भगवान् का आदेश है कि 'तुम केवल मुझमें ही अपने पूरे मन को लगाओ। यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम मुझमें ही निवास करोगे'। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

× × ×

मन बड़ा ही धूर्त है। इस पर एकाएक नियन्त्रण करना किसी के लिए साध्य नहीं है। इसको वश में लाने के लिए दीर्घकाल तक धैर्यपूर्वक सतत प्रयत्न करना पड़ता है।

× × ×

मैले दर्पण में मुँह नहीं देखा जा सकता। जब तक मन निर्मल नहीं होगा तब तक शान्ति कैसे मिल सकती है? जो वस्तु अस्थाई है उसके प्रति अपनी आसक्ति से मुक्त होने का प्रयत्न करो और एकमात्र सत्य-स्वरूप परमात्मा से अपने को संयुक्त करो।

× × ×

महापुरुषों, महापर्वतों, महानदियों, महातीर्थों इत्यादि में तुम्हारा मन लग जायगा तो तुम भी महान् हो जाओगे। जैसे भी हो मन को विशाल बनाओ।

× × ×

हे मन! तू क्यों बाहर जाकर भटक रहा है? एक बार आँख खोल और अन्दर तो देख। वहाँ कैसा आनन्द का पूर्ण साम्राज्य चमक रहा है। फिर तू बाहर जाने की कभी सोचेगा ही नहीं।

× × ×

तोते को पिंजड़े के भीतर ही सुरक्षित रखना चाहिए। यदि उसको बाहर छोड़ा जायगा तो वह बिल्ली का शिकार हो जायगा। ऐसे मन को भी अन्दर रखो। बाहर छोड़ोगे तो विषयों से फँस कर सङ्कट में पड़ जायगा।

× × ×

तुमने किसी नर्तकी को पूरा पानी का भरा घड़ा अपने सिर पर रख कर ताल के अनुसार नृत्य करते देखा होगा। घड़े

में से एक बूँद भी पानी नहीं छलकता। उसका पूरा ध्यान निरन्तर उस घड़े पर ही लगा रहता है। इससे हमको यह शिक्षा मिलती है कि भगवान् में पूरे मन को लगाये हुए हम कोई भी काम भलीभाँति कर सकते हैं।

× × ×

मन की शुद्धि के लिए नाम-जप बहुत सहायक है। जितना ही अधिक जप हो उतना ही अच्छा। इससे सच्चा सुख और शान्ति मिलेगी।

× × ×

भगवत्-सत्ता ही सब वस्तुओं को सौन्दर्य और श्रेष्ठता देती है। यदि भगवत्-सत्ता न हो तो सब शव-रूप हो जाएँ। अतः हमको सदैव अपने मन को भगवान् के चरणकमलों में रमाना चाहिए। वे ही सौन्दर्य और चेतना के निधान हैं। सभी वस्तुओं को वे ही सौन्दर्य और चेतना देते हैं।

× × ×

"अशुभेषु निविष्टं यत् शुभेष्वेवावतारयेत्।
प्रयत्नात् चित्तमित्येतत् सर्वशास्त्रार्थसंग्रहः॥"

अशुभ मार्ग में विचरते हुए मन को शुभ मार्ग में लाने का प्रयत्न करना चाहिए। यही हमारे सारे शास्त्रों का सार है।

× × ×

लौकिक विषयों से मन को मुक्त करके भगवत् पादारविन्दों में ही रमाने का प्रयत्न करो।

× × ×

भगवत् आनन्द जी भर कर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रखो।

वे लोग भाग्यशाली हैं जो भगवान् को अपने हृदय में प्रथम स्थान देते हैं।

× × ×

जितना अधिक से अधिक हो सके भगवच्चिन्तन करते रहो—उसकी कृपा, दया, अनुकम्पा, महानता, करुणा इत्यादि का चिन्तन करो।

× × ×

हमारे मन की यह दशा है कि यदि भगवान् स्वयं आ कर हमारे दरवाजे को खटखटाये तो हम उसको भी कह देंगे कि श्रीमान् थोड़ा ठहरिए। मुझे इस समय आपसे मिलने का अवकाश नहीं है। कुछ वर्षों बाद आइएगा।

× × ×

अनावश्यक कार्यों में मन लगाने के लिए हमें बहुत समय मिल जाता है। उस सर्वान्तर्यामी—जो कि मुख्य है और हम-में ही स्थित है और सब प्रवृत्तियों के लिए हमें शक्ति प्रदान करता है—को स्मरण करने तक के लिए हमें समय नहीं मिलता। यह बड़ा आश्चर्य है।

× × ×

सन्तुलन सदा बनाये रखना सीखो। न हर्षोन्मत्त ही होओ और न निरुत्साही ही।

× × ×

उत्तरोत्तर शक्तिशाली मनुष्य बनो। तुम्हारे विचारों में स्थिरता होनी चाहिए, अस्थिरता नहीं।

× × ×

विचारों से मनुष्य बनता है। यदि बुरे विचार तुम्हारे मन में प्रवेश करें तो उनमें रस मत लो, उनमें फँसो मत। इससे वे तुम्हें स्वयं छोड़ देंगे; परन्तु यदि तुम उनका स्वागत करोगे और उनमें रस लोगे तो वे तुम्हें छोड़ेंगे नहीं और बहुत उपद्रव करेंगे।

× × ×

दूसरों के दुःख से तुम्हारा हृदय पिघलना चाहिए। जिसके हृदय में यह भाव है वह निश्चय ही आगे बढ़ जायगा (अर्थात् अध्यात्म मार्ग में शीघ्र उन्नति करेगा)।

× × ×

कामिनी-कञ्चन ही अध्यात्मोन्नति के मुख्य विरोधी तत्त्व हैं। जैसे धन सदा ही कष्टकारी समझा जाता है, उसी प्रकार यह भी समझो कि पुरुष अथवा स्त्री का शरीर भी रक्त-मांसादि से ही बना है।

× × ×

यदि तुमको नियन्त्रण करना है तो अपनी इन्द्रियों का नियन्त्रण करो। इसके लिए तुमको अपनी रसना को नियन्त्रण में रखना आवश्यक है न कि उसका दास होना। जब तक रसना पर नियन्त्रण न होगा तब तक इन्द्रियाँ वश में नहीं होंगी।

× × ×

रसनेन्द्रिय का नियन्त्रण करो। इसका नियन्त्रण न करोगे तो दूसरी इन्द्रियों का नियन्त्रण सम्भव नहीं है। यदि इस इन्द्रिय का नियन्त्रण कर लोगे तो बाकी सब इन्द्रियों का नियन्त्रण सहज हो जायगा। अजितेन्द्रिय मनुष्य सचमुच दास है। जितेन्द्रिय हो जाओगे तो जीवन्मुक्त हो जाओगे।

× × ×

दूसरों के दुःख में दुःख और सुख में सुख मानना—यही तुम्हारा स्वभाव हो जाय तो निःसन्देह तुम्हारी लौकिक तथा आध्यात्मिक उन्नति हो जायगी। मन को पूर्ण पवित्र और विशाल बनाओ। प्रेम तुम्हारा सहज गुण हो जाय। भगवान् प्रेम-स्वरूप है। इससे दैवी सम्पत्ति तुममें सदा विकसित होती जायगी। इसमें सन्देह नहीं। तुम्हारा कल्याण हो!

× × ×

शान्ति में ही सुख है। अतः मन को शान्त रखने के लिए सदा प्रयत्नशील रहो। इसके लिए सत्सङ्ग परम आवश्यक है। शान्ति! शान्ति! परम आनन्द प्राप्त होगा।

× × ×

मन के शान्त होने से ही आनन्द प्राप्त हो सकता है। इस शान्ति को प्राप्त करने के लिए लोग नारी, धन, मदिरा, नाम, प्रतिष्ठा तथा पद के पीछे दौड़ते हैं; परन्तु बहुत थोड़े से ही लोग ऐसे हैं जो ठीक रीति से—आध्यात्मिक रीति से—जप, ध्यान, प्रार्थना आदि के द्वारा मन का नियन्त्रण कर पाते हैं।

× × ×

तुम क्या चाहते हो, पहले इसका निर्णय करो। प्रायः मनुष्य कामिनी, कञ्चन, यश तथा मान, के लिए दौड़ता है। वह विचार करता है कि इनमें ही आनन्द है; परन्तु यह भ्रममात्र है। आनन्द शान्ति में ही है। यदि किसी को विषय-भोग में सुख मिलता भी हो तो वह उससे नहीं बल्कि उसके द्वारा मन के क्षणभर के लिए शान्त हो जाने से मिलता है। इस शान्त मन के द्वारा ही सुख मिलता है। इन विषय-भोगों से सुख की खोज करोगे

तो तुम्हारा जीवन नष्ट हो जायगा और सच्चा आनन्द कभी नहीं मिलेगा। इसलिए मन को शान्त रखो। सदैव आनन्द ही मिलेगा।

× × ×

सुख कब मिलता है, क्या तुम जानते हो? हम स्वादिष्ट भोजन करते हैं, सुरीला गाना सुनते हैं, आकर्षक नृत्य देखते हैं। ऐसे अवसर पर हमारा मन शान्त हो जाता है। इसलिए आनन्द शान्ति में ही है। और यह शान्ति है कहाँ? यह हमारे हृदय में ही है। जब मन स्थिर होता है तब शान्ति उसमें प्रतिबिम्बित होती है जैसे कि सूर्य का प्रतिबिम्ब साफ स्थिर जल में पूर्ण रूप से दीखता है।

× × ×

हे मन! तुम क्या चाहते हो? क्षणिक लौकिक भोग के पीछे मारे-मारे फिर कर तुम क्या प्राप्त करना चाहते हो? यदि तुम ऐसे ही मारे-मारे फिरोगे तो तुम निश्चय ही विनाश को प्राप्त होगे। इस भाग-दौड़ को बन्द करो। केवल अन्तःप्रवेश करो। तुम्हें शान्ति—अनन्त शान्ति मिलेगी।

× × ×

सदा प्रसन्न रहो। इससे तुमको दूसरों को प्रसन्न रखने में भी सहायता मिलेगी और तुम्हारे स्वास्थ्य को भी लाभ होगा।

× × ×

क्या तुमने कस्तूरी मृग देखा है? उसकी अपनी नाभि में जो कस्तूरी है उसकी सुगन्ध बाहर फैलती है। यह सोच कर कि यह सुगन्ध कहीं बाहर है वह जीवनभर दौड़ता-फिरता है और अन्त में उसको पाये बिना ही मर जाता है। ऐसे

ही आनन्द हमारे भीतर ही है; परन्तु हम उसको बाह्य विषयों में खोजते हैं और अपना जीवन नष्ट कर देते हैं।

× × ×

रेगिस्तान में जल की-सी चमक देख कर मृग बहक जाता है। उसको जल समझ कर वह प्यास बुझाने के लिए इधर-उधर दौड़ता है। परन्तु उसको जल मिले कहाँ? दौड़ते-दौड़ते अन्त में प्यास के कारण वह अपने प्राण गँवा देता है। विषयासक्त लोगों का भी यही हाल होता है।

× × ×

पानी के नल में से सारी हवा बाहर निकालने पर पानी ऊपर चढ़ेगा। जरा-सी भी हवा रहेगी तो पानी नहीं चढ़ेगा। सारी हवा निकलते ही पानी एकदम दौड़ जायगा। हमारे मन में जरा-सी भी लौकिक अभिलाषा रहेगी तो ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त करना कठिन है। सब भौतिक अभिलाषाओं को बिलकुल ही बाहर निकाल दो। मन ईश्वर के निवास के योग्य बन जायगा।

× × ×

मन में सन्तुलन बनाये रखो। उसको ढील मत दो।

× × ×

विचारों से मनुष्य बनता है। अपने भीतर बुरे विचारों पर ध्यान मत दो। सोने से पहले थोड़ा 'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतंगमय' का जप कर लिया करो।

●

विवेक और वैराग्य

यदि कोई हमारी सम्पत्ति को छीन ले तो हमको अपनी पूरी ताकत से उससे लड़ना पड़ेगा। तभी हम उसको वापस ले सकते हैं। हमारी सच्ची सम्पत्ति ज्ञान है। इन्द्रियाँ उसे छीनती हैं। यदि हम इन्द्रियों से डट कर लड़ें तभी उसे पुनः पा सकते हैं।

× × ×

तुम एक ही समय में पूर्व और पश्चिम दोनों दिशाओं में नहीं जा सकते। भौतिक जीवन को पूरी तरह से त्याग दो। तभी आध्यात्मिक जीवन में शीघ्र प्रगति होगी।

× × ×

संसार में हंस के समान रहो। हंस की तरह नीर-क्षीर-विवेक से काम लेकर सत्-असत् को पृथक् करो। केवल भगवान् ही सत् है। उसके अतिरिक्त सब असत् है। इसका ज्ञान हो जाने पर तुम संसार में बिना प्रभावित हुए विचरण कर सकते हो। आसक्ति और भ्रम ही बुरे हैं।

× × ×

हम अज्ञान के कारण ही दुःख भोगते हैं। अपरोक्ष ज्ञान हमको शान्ति और आनन्द देता है। अतः अपने ज्ञान को बढ़ाओ। जैसे-जैसे ज्ञान बढ़ेगा, वैसे-वैसे हमारी शक्ति और बुद्धि बढ़ती जायगी।

× × ×

ज्ञान प्रकाश है और अज्ञान अन्धकार। अन्धकार से छूटने का प्रयत्न करो और अनन्त प्रकाश का साक्षात्कार करो।

× × ×

सब लोग बड़े बुद्धिमान् हैं। एक दिन यहाँ से जाना होगा इसका विचार तक नहीं करते। उस महायात्रा के लिए क्या सम्बल अर्जित करके रखा है इसका विचार तो करो।

× × ×

तुम बड़े बुद्धिमान् हो। याद रखो कि देर-सबेर तुमको सबको छोड़ कर जाना पड़ेगा तो इन सबमें इतनी आसक्ति क्यों? आँख खोलो। तुम्हारा वास्तविक निवास-स्थान कहीं और ही—भगवान् के चरणों में है। तो उस विशाल महल में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने का प्रयास करो। इधर-उधर मारे-मारे फिर कर धन और अमूल्य समय क्यों गँवाते हो? तुमको वास्तव में चाहता है कौन? सब अपना धन इत्यादि का स्वार्थ पूरा करना चाहते हैं। अतः उन्हें धन देकर शान्त हो जाओ। "सत्सङ्गत्वे निःसङ्गत्वम्।"

× × ×

शक्ति ही जीवन है और इसके विपरीत शक्तिहीनता मृत्यु है। एकमात्र आध्यात्मिक जीवन से ही सच्ची शक्ति प्राप्त करने की आशा की जा सकती है।

× × ×

शक्ति-सञ्चय ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। उस बर्तन में पानी कैसे रखा जा सकता है जिसमें चार-पाँच छेद हों। पानी उन छिद्रों के द्वारा निकल जायगा। हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ही पाँच छिद्र हैं। इन छिद्रों के द्वारा सारी शक्ति नष्ट हो

जाती है। परन्तु शक्ति-सञ्चय भी इन्हीं के द्वारा किया जाता है। जब हम सदाचारी व्यक्तियों, कल्याणकर वस्तुओं का निष्ठा से दर्शन करते हैं तो आँखों द्वारा हमें शक्ति मिलती है। पापी और बुरी वस्तु को देखते हैं तो इन्हीं आँखों के द्वारा शक्ति निकल भी जाती है।

× × ×

पुण्यातिरेक से ही मनुष्य-जन्म मिलता है। मच्छर, मक्खी, चिड़िया, वृक्षादि चौरासी लाख योनियों के पश्चात् ही मनुष्य-जन्म मिलता है। यदि ऐसे मनुष्य-जन्म का उपयोग न किया जाय तो कितने दुःख की बात है। इन्द्रिय-सुख में पड़े हुए व्यक्ति को पशु-योनि में ही जन्म लेना पड़ता है। इस पतन का स्मरण रख कर व्यक्ति को भगवत्-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

× × ×

समय बहुमूल्य है। उसका उपयोग अच्छी तरह से ही करो। बीता समय फिर नहीं प्राप्त होता। समय को बुरी बातों में, बुरे विषयों में मत लगाओ। यदि वह अच्छे विषयों में लगाया जायगा तो जन्म निश्चय ही सफल हो जायगा।

× × ×

सारे शोक का मूल कारण अज्ञान है। सच्चा ज्ञान सब दुःखों का नाश करके नित्य सुख प्रदान करता है। ज्ञानोपदेश ही सच्ची सहायता है।

× × ×

विवेक से ही मनुष्य और पशु में अन्तर जाना जाता है। बिना विवेक के मनुष्य पशु समान है। पशुओं की तरह आहार,

निद्रा में ही विशेषतया लोग समय व्यतीत करते हैं। विवेक का सम्पादन करो और जीवन को सुखी बनाओ।

× × ×

मनुष्य ऐसे सुख के लिए क्यों उत्सुक रहता है जो क्षणिक है? विवेकी मनुष्य को चाहिए कि वह उसको प्राप्त करे या करने का प्रयास करे जो क्षणिक नहीं, स्थायी हो।

× × ×

मनुष्य-जन्म का अभिप्राय यह है कि हम प्रकाश में जायें और उत्तरोत्तर विवेक-बुद्धि प्राप्त करें न कि अज्ञान, अन्धकार, अभिमान इत्यादि में पड़े रहें। परन्तु इन सबकी चिन्ता किसको है? एक बुद्धिमान् कवि ने ठीक ही कहा है कि सारा संसार माया की मदिरा के नशे में मतवाला हो गया है जिसके कारण वह अपने मार्ग से भटक गया है। भगवान् सबका भला करे।

× × ×

हमसे जो दूर हैं, स्पष्ट रीति से पृथक् हैं, जैसे स्त्री, पुत्र, मित्र, धन इत्यादि, उनका हम सदा ध्यान करते रहते हैं; परन्तु जो तत्त्व हमारे अति-निकट है और हमसे अलग नहीं है और हमें सब प्रकार से चेतना देता है उसके विषय में विचार करने में हमें बड़ी कठिनाई होती है। क्या यह बड़ा आश्चर्य नहीं है?

× × ×

हमें अपने ज्ञान को हर प्रकार से बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। हमें हरएक दिखायी देने वाली चर और अचर वस्तु से शिक्षा लेनी चाहिए। उनका ध्यानपूर्वक निरीक्षण करके जो सत्य उनसे प्रकट होता हो, उसे ग्रहण करो।

× × ×

यह दुनिया हमें प्रति क्षण बहुत-सी बातें सिखाती है। यहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है। सब काल के गाल में हैं। ऐसे काल के गाल में स्थित पदार्थों को स्थिर मान कर उनके पीछे भागोगे तो अन्त में बहुत पछताना पड़ेगा। परन्तु इस पर कौन ध्यान देता है ?

× × ×

"पुत्रादपि धनभाजां भीतिः" (धनी को अपने पुत्र से भी भय होता है)। धन सचमुच कष्टकारी है। पुण्यभूमि ऋषिकेश में एक पुत्र ने अपने धनी पिता की हत्या की या करवायी ऐसा सुना जाता है। ऐसे घातक धन से भ्रमित होना सचमुच भयावह है।

× × ×

यदि मनुष्य अपनी भूलों के लिए सच्चाई से भारी पश्चात्ताप करे तो वह फिर सुरक्षित हो जायगा। संसार केवल मिथ्या है। हमको विश्वास कुछ कराया जाता है, पर हम करते उसके विपरीत ही हैं।

× × ×

यह संसार है—सब स्वप्न है—केवल स्वप्न है। वे भाग्यशाली हैं जो इसकी वास्तविकता को देखते हैं—कि यह चञ्चल और अस्थिर है।

× × ×

संसार हमको सिखाता है कि हमको अपना मन उससे नहीं लगाना चाहिए वरन् जो शाश्वत सत्य है—भगवान् है—उससे अधिकाधिक अपने को लगाये रखना चाहिए।

× × ×

मनुष्य को आध्यात्मिक दृष्टि से अपना अधीक्षक स्वयं होना चाहिए। तुमको अपनी स्थिति का ज्ञान होना चाहिए। तुम पञ्चेन्द्रिय—मन, बुद्धि, अहङ्कारादि से परे हो। तुम केवल साक्षी हो। इसको समझो और बन्धन-मुक्त हो जाओ।

× × ×

मनुष्य को सर्वतोमुखी हो जाना चाहिए। उसमें यह योग्यता होनी चाहिए कि वह केवल भले और बुद्धिमान् लोगों में ही न मिलजुल सके वरन् पशुसम, दुष्ट, शत्रु सरीखे लोगों में भी रह सके; परन्तु उसमें यह विवेक होना चाहिए कि पशुवत् लोगों में रह कर वह स्वयं भी वैसा न बने। उनसे अलग रहे। प्रत्येक अवसर पर अपनी बुद्धि और विवेक का प्रयोग करे। तभी वह अपना अधीक्षक बन सकता है।

× × ×

आध्यात्मिक साधना करने वाले के दो नेत्र—विवेक और वैराग्य हैं। इनको सदा खुला रखने का प्रयत्न करो।

× × ×

यह सारा संसार तुम्हारे आश्रित नहीं है इस बात को समझो। तुम्हारा जीवन थोड़ा है और मार्ग बहुत लम्बा। हे पथिक ! द्रुतगामी और कुशल बनो।

× × ×

तुम अपने चारों ओर जो देखते हो, वह है क्या ? प्रकृति जड़ है। वह स्वयं कुछ नहीं कर सकती। तुमको उसको देखना है जो तुम्हारी अन्तरात्मा है और सब कार्य कराती है। यही प्रत्यक्ष अनुभव है। उस शक्ति को देखो जो हर समय

और हर जगह निर्देशित करती है। उसका निरन्तर स्मरण रखो। "तत्त्वमसि"—वह तुम हो।

× × ×

तुम क्या चाहते हो ? क्या तुम स्वास्थ्य, धन, बल, जीवन, सुख, बुद्धि तथा पाण्डित्य चाहते हो ? या तुम सत्य का साक्षात्कार प्राप्त करना चाहते हो और सदा के लिए मुक्त हो जाना चाहते हो ?

× × ×

सांसारिक जीवन में धन का बड़ा महत्त्व है। तुमको धन-सम्बन्धी विषयों में भी विशेष सावधानी रखनी चाहिए।

× × ×

ग्रह भी मनुष्य को प्रभावित कर सकते हैं, कुछ शरीर को, कुछ मन को। सूर्य और चन्द्रमा दृष्टिगोचर ग्रह हैं। उनका कितना बड़ा प्रभाव है।

× × ×

ज्योतिष महान् शास्त्र है। केवल वे महापुरुष ही भविष्य के विषय में ठीक से कुछ बता सकते हैं जो सदाचारी, विद्वान्, और अनुभवी हों। जो लोग भगवान् को पाने के प्रयास में लगे हैं उनकी देखभाल भगवान् स्वयं करते हैं। अतः चिन्ता क्या ?

× × ×

जीवन को शान्तिमय और सुखी बनाने का प्रयास करो।

× × ×

संसार को देखो। सब मिथ्या ही मिथ्या है, माया है। केवल प्रभु ही सत्य है। उसी में अपना पूरा मन लगाने का प्रयत्न करो।

जीव का न जन्म होता है और न मृत्यु ही; शरीर ही आता-जाता रहता है। इसमें भी वास्तविकता नहीं है केवल दिखायी देता है। एक स्वप्न मात्र है। जन्म-मृत्यु, भाग्य-दुर्भाग्य, पति-पत्नी, भाई-बहन, माता-पिता—सब स्वप्न—यथार्थ में स्वप्न है। जब तक व्यक्ति इस स्वप्नावस्था से जागता नहीं है, तब तक उसको टिकाऊ आश्रय प्राप्त करने की कैसे आशा हो सकती है ? हमारा कर्त्तव्य—मुख्य और सर्व-प्रथम कर्त्तव्य—है कि हम जागें और वास्तविक प्रकाश को देखें। प्रभु हम सबको आशीर्वाद दे कि हम इस उद्देश्य को प्राप्त करें !

× × ×

अपने मन को वास्तविक तत्त्व पर जमाओ। दूसरी वस्तुओं को खेल मात्र समझो। तुमको खेल भी खेलना है। घर में रहो; परन्तु घर के होकर मत रहो। एक भक्त की तरह तुमको सबकी देखभाल करनी है।

× × ×

यदि तुम आध्यात्मिक जीवन में प्रगति चाहते हो तो तुमको भौतिक जीवन का त्याग करना पड़ेगा; क्योंकि भौतिकता और आत्म-तत्त्व दोनों एक-दूसरे के विपरीत छोर हैं। मेरा अभिप्राय यह नहीं है—कदापि नहीं है—कि तम सब-कुछ छोड़ कर किसी जङ्गल में चले जाओ। यदि तुममें वैराग्य की भावना पूरी तरह से आ जायगी तो तुम इस व्यस्त संसार से स्वयं भाग खड़े होगे जैसे मछली सूखी भूमि से जल में जाती है। 'मैं' और 'मेरा' से प्रबल अनासक्ति प्राप्त करने का प्रयास करो। संसार में रहो; परन्तु संसार के होकर मत रहो। जो सचमुच हमारा है वह हमारी अपनी आत्मा या भगवान् है

और कुछ नहीं। इसको ही अपना समझो और प्रेम, विश्वास तथा भक्ति को बढ़ाओ। इससे तुम सरलता से अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकोगे। सावधान रहो! काम, क्रोधादि वासनाएँ चोर की तरह तुममें निवास करती हैं जो तुम्हारी आध्यात्मिक सम्पत्ति को चुराने के लिए अवसर खोजती रहती हैं। अतः सतर्क रहो। ब्रह्मचर्य के बिना व्यक्ति एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता। सच्चे गृहस्थ जीवन से भी लक्ष्य प्राप्त हो सकता है।

× × ×

क्षणिक सुख के लिए व्यक्ति को कितना कष्ट उठाना पड़ता है। प्रसव के समय गर्भिणी जो यातना भोगती है वह प्रसव के के बाद जल्दी ही भूल जाती है और पुनः सन्तानोत्पत्ति में लग जाती है। परन्तु सच्चे आनन्द के लिए जरा-सा भी दुःख सहन करने के लिए कोई तैयार नहीं होता। क्या यह बड़ा अचम्भा नहीं है।

× × ×

आध्यात्मिक जीवन के लिए विवेक और वैराग्य आवश्यक हैं।

× × ×

जब आम पेड़ पर पक जाता है तो पृथ्वी पर गिरे बिना नहीं रह सकता। इसी प्रकार जब मनुष्य में पूर्ण वैराग्य आ जाता है तो वह संसार छोड़े बिना नहीं रह सकता और उसकी शरण ग्रहण करता है जो उसकी आवश्यकता को पूरी कर सकता है। इसके अनेक उदाहरण हैं कि महान् आत्माओं ने भगवान् को प्राप्त करने के लिए सब-कुछ त्याग दिया। तुम्हारे पास बहुत काम है। उसको अच्छी तरह से करो।

× × ×

जब तक तुम वैराग्य का अभ्यास नहीं करोगे तब तक तुम ध्यान में प्रगति नहीं कर सकोगे। तुम्हें सारे संसार को ठुकराना होगा।

× × ×

यदि तुमको भगवत्-प्राप्ति की तीव्र इच्छा हो जायगी तो तुम संसार से अपने-आप अलग हो जाओगे।

× × ×

सब मिथ्या है—मिथ्या के सिवाय और कुछ नहीं है। यह सचमुच बड़े आश्चर्य की बात है कि जो लोग अपने-आपको बड़े बुद्धिमान् होने का दावा करते हैं वे इस सत्य को नहीं समझते और भौतिक विषयों में पड़ कर बहक जाते हैं और अपना जीवन नष्ट करते हैं। वे आँखें खोल कर इस सत्य को कब देखेंगे?

× × ×

वैराग्य-बुद्धि को पुष्ट करो। तब तुम सदा सुखी रहोगे।

× × ×

अध्यात्म वहीं से आरम्भ होता है जहाँ से भौतिकता समाप्त होती है। जब तक व्यक्ति यह सोचता है कि संसार सत्य है तो वह उससे अलग कैसे जा सकता है? वह सांसारिक वस्तुओं में अधिकाधिक लिप्त होता जायगा। तीव्र विरक्ति की आवश्यकता है। इस मानसिक स्थिति की प्राप्ति के लिए हमको अपनी आँखें खोलनी होंगी और संसार की वास्तविकता को देखना होगा—सब विनश्वर है—हमारे साथ कुछ भी नहीं जायगा। उसको ढूँढ़ो जो शाश्वत है। वह एकमात्र भगवान् ही है। वह दूर नहीं है। वह तुम्हारी अपनी आत्मा ही है। भक्ति,

योग, ज्ञान अथवा किसी अन्य साधन के द्वारा जितना ही अनुराग अपनी आत्मा से रखोगे उतना ही तुम संसार से अनासक्त होते चले जाओगे और सफलता निश्चित है। इसलिए मनुष्य को अन्तरावलोकन का प्रयोग करना पड़ेगा और भगवान् से प्रार्थना करनी होगी कि वह उसका पथ-प्रदर्शन करे और आगे ले चले।

× × ×

मन को वश में लाना कोई सहज कार्य नहीं है। देवत्व के प्रतिकूल प्रत्येक वस्तु के प्रति तीव्र वैराग्य प्राप्त होने पर ही वह पूरी तरह से वश में किया जा सकता है। इसके लिए तुम्हें अपने विवेक का उपयोग करना पड़ेगा। संसार ! यह है क्या ? हर एक क्षण यह बदलता रहता है। इसलिए हम इस पर भरोसा नहीं कर सकते। यदि करेंगे तो विनष्ट हो जायेंगे। अतः अपने विश्वास और आशा को उसमें—भगवान् में—जमाओ जो कभी परिवर्त्तित नहीं होता और सत्य है।

× × ×

वैराग्यपूर्ण जीवन ही मनुष्य को वास्तव में महान् बना सकता है। पहले अपनी आवश्यकता का निश्चय करो। तुमको कुछ ऐसा उपार्जन करना चाहिए जिसको तुम अपना कह सको—जो सदा तुम्हारे साथ रहे चाहे शरीर भी तुमको छोड़ दे।

× × ×

सांसारिक उपभोगों से जितनी जल्दी उदासीन हो जाओगे उतनी ही जल्दी शान्ति मिल जायगी। आज नहीं तो कल, तुमको सब सांसारिक पदार्थों को छोड़ कर खाली हाथ ही

जाना पड़ेगा। यदि व्यक्ति इसके लिए पहले से ही तैयार रहे तो अन्तकाल में शोक नहीं करना पड़ेगा।

●

मोह और आसक्ति

सारे दुःख और क्लेश का कारण उन वस्तुओं और व्यक्तियों में प्रबल आसक्ति है जो तुम्हारे पास सदैव नहीं रहेंगे; परन्तु जिन पर तुमने 'मैं' और 'मेरा' होने का दावा कर रखा है। यह आसक्ति यदि वास्तविक तत्त्व की ओर—भगवान् की ओर—लगा दी जाय तो तुमको बन्धन से मुक्ति और पूर्णानन्द प्राप्त करायेगी।

× × ×

जिनको माता, पिता, पत्नी, भाई, बहन, पुत्र, पुत्री इत्यादि कहते हैं, वे हैं क्या ? यह सब मिथ्याध्यास है। तुम उस प्रत्येक वस्तु के आन्तरिक स्वरूप में प्रवेश करो जिसको तुम प्रिय कहते हो। सब शून्य है। विवेकी को संसार के इस निरर्थक स्वरूप को समझना चाहिए और अपने को उससे बिलकुल दूर—पूरी तरह से स्वतन्त्र रखना चाहिए, तनिक-सी भी आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। अतः इस अवस्था को प्राप्त करो। तभी तुम संसार में रह कर संसार के होकर नहीं रहोगे।

× × ×

भगवान् की लीला गहन है। किसका पुत्र, किसकी पत्नी, क्या बाप, क्या माँ ? सब मिथ्या है। इस सत्य को जानना

चाहिए। तभी व्यक्ति तथाकथित दुर्भाग्य से विशेष प्रभावित नहीं होगा।

× × ×

अपने लक्ष्य को सामने रखो। आखिर है तो सब माया ही। क्या स्त्री, क्या सन्तान, सब है क्या? सब स्वप्न ही तो है। संसार के स्वरूप पर विचार करो। इससे तुम्हारा मोह घटता जायगा। जागते रहो और जब तक लक्ष्य न प्राप्त हो आगे बढ़ते जाओ।

× × ×

तुम्हारे अपने हाथों ने ही उस रस्सी को पकड़ रखा है जो तुम्हें नीचे की ओर खींचे लिए जा रही है। रस्सी को छोड़ दो और मुक्त हो जाओ। यदि कोई उसको बहुत कस कर पकड़े रहे तो फिर उपाय ही क्या है?

× × ×

तुमको अपने और संसार के बीच का जो बन्धन है, उसको तोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए। तुम साहसी हो। यदि तुम इस बन्धन को निर्ममता से काट सको तो सब-कुछ पूरा हो जाय।

× × ×

तुम अपने कल्पित स्वरूप पर अधिक आसक्त हो रहे हो। अपने वास्तविक स्वरूप को अधिक महत्त्व देने का प्रयास करो।

× × ×

अविवेकपूर्ण आसक्ति सचमुच नरक ही है।

× × ×

आसक्ति नरकाग्नि है जबकि अनासक्ति अनन्त आनन्द है।

× × ×

संसार में रहो; परन्तु संसार के होकर नहीं। इसका अभिप्राय है अनासक्त भाव से जीवन व्यतीत करना। शक्ति ही जीवन है।

× × ×

भौतिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति नरक के सिवाय और कुछ नहीं है और प्रभु के प्रति आसक्ति सचमुच स्वर्ग है। इन दोनों में से जो चाहो अपनाओ।

× × ×

भौतिक पदार्थों में आसक्ति सचमुच नरक है और इन सांसारिक सुखों की लालसा से मुक्ति वास्तविक स्वर्ग है। उन वस्तुओं के पीछे मारे-मारे फिरने से लाभ ही क्या है जो दूसरे क्षण में हमारे पास रहें या न रहें। अतः बुद्धिमान् को चाहिए कि वह अपना मन किसी ऐसी वस्तु में लगाये जो अविनाशी है। वह वस्तु भगवान्—केवल भगवान् ही है। अतएव अपना सारा का सारा मन, बिना कुछ भी बचाये हुए, उस प्रभु में लगा दो और उसके प्रेम में डूब जाओ।

× × ×

सत्य का व्यावहारिक अनुभव करो। वही एकमात्र वास्तविकता है। अन्य सब मिथ्या ही है। अतः झूठी चीजों के पीछे क्यों दौड़ते हो?

× × ×

यदि व्यक्ति मन को सांसारिक विषयों से मुक्त नहीं कर सकता और भगवान् के चरणों में नहीं रमा सकता तो स्वाध्याय और पूजा करने का उपयोग ही क्या है? सांसारिक पदार्थों में आसक्ति सचमुच नरक है।

× × ×

यदि मैं तुमको एक हजार रुपये अपने पास रखने को इस शर्त्त पर दूं कि जब कभी मैं उसे माँगूं तो तुम उसे मुझे लौटा दो, तो ऐसे धन से तुमको मोह न होना चाहिए। मोह सारा काम बिगाड़ देता है। प्रभु में दृढ़ विश्वास और श्रद्धा रखो। वह तुम्हारा केवल हित ही करेगा।

× × ×

सच तो यह है कि हमारा कुछ भी नहीं है। हम 'मैं', 'मेरा' की छाप हर एक वस्तु पर लगाते हैं चाहे वह दूसरे ही क्षण में रहे या न रहे। इसी कारण हमको दुःख भोगना पड़ता है। भगवान् ही हमको देता है और लेता भी वही है।

× × ×

गरीबी में भी कुछ गुण हैं। जो लोग पूरी तरह से इन्द्रिय-सुख लेना चाहते हैं उनके लिए धन का अभाव इस लालसा की पूर्त्ति में बाधक होता है। इसके कारण उनको रुकना और विचार करना पड़ता है। ऐसे लोग भाग्यवान् हैं।

× × ×

त्याग की चित्तवृत्ति सरलता से लक्ष्य तक—सत्य तक—प्रभु तक पहुँचा देगी। संसार को देखो। प्रायः सभी माया के तीव्र मोह से, 'मैं', 'मेरा' से मदमस्त हो रहे हैं यद्यपि 'मेरा' उसी को कहा जा सकता है जो सदैव हमारे साथ रहे। सच तो यह है कि हमको अपने शरीर को भी अपना कहने का अधिकार नहीं है। अतः जो सत्य है उसमें अपना मन स्थिर करो। इससे तुम्हारे सारे भय, निर्बलता इत्यादि उसी तरह से लोप हो जायंगे जैसे सूर्य के आगे पाला।

× × ×

जब तक व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं जानता, वह शारीरिक कार्यों में ही लीन रहता है। और, जब तक हम तथाकथित कर्त्तव्यों के करने में लीन रहते हैं, हम 'मैं' और 'मेरा' में बँधे रहते हैं जिससे हम अधिकाधिक शरीर में आसक्त होते जाते हैं।

× × ×

इस प्रकार अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान न होने के कारण और शरीर को सत्य मान कर हम सभी प्रकार के कर्मों को करने के लिए बाध्य हो जाते हैं और जब तक हमारा मन वासुदेव में, जो कि अनन्त प्रभु है, स्थिर नहीं हो जाता, हम कर्म से छुटकारा नहीं पा सकते।

× × ×

सत्य ज्ञान वाला व्यक्ति जब तक इन्द्रियों का दास नहीं बनता उसको अपने शरीर और इन्द्रियों को तृप्त करने हेतु, पारिवारिक (वैवाहिक) जीवन में प्रलोभनों को तृप्ति हेतु नहीं फँसना पड़ता।

× × ×

वैवाहिक जीवन में पति-पत्नी अत्यन्त आसक्त हो जाते हैं, एक-दूसरे से बँध जाते हैं और इस भ्रम का फल 'मेरी पत्नी, मेरा घर, मेरे पुत्र' का भाव होता है।

× × ×

अतएव इतना आसक्त होने से पहले बुद्धिमान् मनुष्य को इस प्रकार आसक्ति से छुटकारा पाने का भरसक उपाय करना चाहिए जिससे वह आसक्ति में अधिक न फँसे; क्योंकि इससे बहुत हानि होती है।

× × ×

फिर आसक्ति से छुटकारा पाने के लिए उपाय क्या है ? अपने मन को 'मुझ' में जमाओ जो कि तुम्हारा वास्तविक गुरु और स्वामी है। मन की लालसा जो स्त्री और सांसारिक वस्तुओं के प्रति है उसको त्याग करने का प्रयास करो। गर्मी, सर्दी, मान, अपमान इत्यादि को सहन करो। उनको—सांसारिक मनुष्यों को—क्या मिलता है केवल दुःख ही दुःख इस सत्य का विचार करो। इन सबकी वास्तविकता को जानो। अपने मन और इन्द्रियों पर अनुशासन रखने का प्रयास करो। मुझे प्रसन्न करने के कार्य करो, मेरी कथाओं में रुचि रखो। जो मुझसे प्रेम करते हैं उनसे सम्पर्क स्थापित करने में आनन्द लो। मेरे सम्बन्ध में कही गयी कथाओं को पढ़ने और सुनने में रुचि रखो। किसी पर क्रोध मत करो। किसी को अपना शत्रु न मानो। सदैव शान्त रहो। यह मेरा घर है, यह मेरी स्त्री है इत्यादि विचारों को त्याग करने का प्रयत्न करो। भीतर घुसते ही जाओ—शरीर मन इत्यादि के। एकान्त जीवन बिताने का प्रयास करो। इन्द्रियाँ, प्राण इत्यादि को वश में रखो। प्रत्येक कार्य श्रद्धा से करो। ब्रह्मचर्य का पालन करो। जो-कुछ करना है उसकी उपेक्षा मत करो। बहुत बात मत करो।

●

आत्म-निरीक्षण

भगवान् की कृपा से यदि किसी को अपनी भूलों का अनुभव होने लगे तो वह अपने को तुरन्त सुधार सकेगा।

× × ×

लोग दूसरों का दोष देखते हैं; परन्तु अपने दोषों पर जरा भी ध्यान नहीं देते। उनके पतन का यह एक मुख्य कारण है। अपनी भूलों को देखो और एक-एक करके इन काँटों को निकालने का प्रयत्न करो। ऐसा करने से मन को शान्ति मिलेगी।

× × ×

अपने दोषों को पूरी तरह से जानो। उनके लिए पश्चात्ताप करो और भगवान् से प्रार्थना करो कि वे एक-एक करके इनका शमन करें। उनकी दया से ही व्यक्ति उत्तरोत्तर ऊपर उठता जा सकता है।

× × ×

"कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति"—पुत्र के कपूत होने पर भी माता कभी कुमाता (ममताहीन) नहीं होती। 'मैं कपूत हूँ। मेरे इतने अवगुण हैं।' ऐसी भावना को निष्कपट हृदय से भगवान् के आगे रखो। तब सब सम्भव हो जायगा।

× × ×

यदि तुम स्वयं अनुभव करते हो कि तुममें अवगुण हैं जिन से तुम मुक्त होना चाहते हो; परन्तु अपने में उनको दूर करने का बल नहीं पाते तो सम्पूर्ण हृदय से भगवान् से प्रार्थना करो। भगवान् निस्सन्देह ही तुम्हारी सहायता करेगा।

× × ×

किसी भी दोष का सच्चा प्रायश्चित्त है अपने स्वरूप का ध्यान तथा जप करना।

× × ×

सच्चे और निष्कपट रहो। अपने दोषों को भगवान् के सम्मुख स्वीकार करो।

यदि मनुष्य अपनी भूलों और त्रुटियों को पहचानने लगे और उनके लिए दुःखी हो और इच्छा करे कि इनसे किसी तरह से भीछुटकारा पा जाय तो उसको देर या सबेर अवश्य सफलता प्राप्त होगी। ऐसा व्यक्ति अब ठीक मार्ग पर लग गया और भगवान् उसकी सहायता करेगा।

× × ×

चाहे भूल कितनी ही बड़ी क्यों न हो, उसके लिए भी एक परिहार का मार्ग है। निष्कपट और आर्त्त-भाव से पश्चात्ताप करो और भविष्य में ऐसा न हो, इसकी प्रतिज्ञा करो। ऐसा ही आचरण भी करो। तुम्हारी भूलों की क्षमा मिल जायगी। भगवान् परम करुणामय है। ऐसा करने से उसको तरस आयेगा और तुम्हारी सारी भूलों की क्षमा मिल जायगी।

× × ×

सत्य निष्ठा से भगवान् से प्रार्थना करो कि वह तुम्हारी सब त्रुटियों को दूर कर दे। पहले अपनी त्रुटियों को जानो। उनके लिए पश्चात्ताप करो। सचेत रहो और प्रभु से प्रार्थना करो।

× × ×

यदि तुम अनुभव करते हो कि तुमने कोई अनुचित कार्य किया है तो उसका सबसे उत्तम उपाय यह है कि तुम उसका अनुताप इतनी तीव्रता से करो कि तुम उसको दुबारा न कर सको।

× × ×

आध्यात्मिक जीवन कोई सुगम जीवन नहीं है। वह सुगम तभी होता है जब व्यक्ति सांसारिक विषयों से उदासीन हो जाता है और प्रभु-चरणों में अधिकाधिक लगन लग जाती है।

तुमको और सबको अपने मन की समीक्षा करनी चाहिए कि वह ऊपर प्रभु की ओर जा रहा है अथवा संसार की ओर गिर रहा है। सचेत रहो और प्रभु से प्रार्थना करो। यह सर्वोत्तम नीति है। अपनी त्रुटियों का अन्वेषण करो और एक-एक करके उनको दूर करने का प्रयास करो। अपना हृदय प्रभु के आगे खोलो। अपने दोषों को छिपाने की कोशिश मत करो। प्रभु से तीव्र भक्ति के लिए प्रार्थना करो। अपने अन्तर हृदय से यह भावना बनाओ।

× × ×

अपने अन्दर देखो और विचार करो कि तुम आगे जा रहे हो या पीछे पतन की ओर। अपने दोषों को जानो और एक-एक करके उनको दूर करने का प्रयत्न करो।

× × ×

जगज्जननी के सामने तीव्र भावना से अपनी भयङ्कर भूलों को लज्जा और दुःख के साथ स्वीकार करो। अपने दोषों और भूलों पर कभी भी कलई चढ़ाने का प्रयास न करो। ऐसा बारम्बार करो। तभी भगवान् की करुणा से तुममें परिवर्त्तन हो सकेगा। भगवान् सबका कल्याण करे!

× × ×

होली का एक विशेष अभिप्राय है। पुरानी निरर्थक वस्तुओं को निकाल फेंको और नवीन उपयोगी वस्तुओं को अङ्गीकार करो। इतने से ही सन्तोष नहीं करना है। हमको अपने परम शत्रु—घृणा और द्वेष—को पूरी तरह से जला कर भस्म करना है। जब तक हम पर इन राक्षसों का शासन रहेगा तब तक वास्तविक प्रगति की कोई आशा नहीं हो सकती।

हमको इस तथ्य को समझना है और इनको निर्दयता के साथ कुचल कर नष्ट करना है। तभी हम अपने चमकीले, श्रेष्ठ वस्त्र —विशुद्ध प्रेम —को धारण करके एक-दूसरे के गले लग कर नवागत वर्ष में प्रवेश करें। हमें हार्दिक आलिङ्गन चाहिए केवल बाहरी नहीं। होली के पवित्र अवसर पर तुम सब लोगों को मेरा सप्रेम मिलन।

× × ×

यदि मनुष्य को सत्सङ्ग से—महापुरुषों के सङ्ग से—कुछ प्राप्त हो भी जाय तो वह सारा का सारा लोप हो जायगा यदि वह सांसारिक लोगों से, स्त्रियों इत्यादि से बिना विवेक के मिलने-जुलने लगे। यह सत्य है। जहाँ तक हो सके व्यक्ति को इनसे दूर ही रहना चाहिए और अपने विवेक से काम लेना चाहिए।

× × ×

तुम क्या चाहते हो इसको समझो। तब उसके लिए प्रार्थना करो। लोग भगवान् को भी धोखा देने का प्रयत्न करते हैं।

× × ×

संसार में आसक्ति के कारण भगवान् तुम पर जो आध्यात्मिक क्षेत्र में अनुग्रह करते हैं उसको तुम स्वीकार तक नहीं कर पाते। अपने मन को देखो कि तुम उन्नति या अवनति की ओर जा रहे हो।

× × ×

जो नाव बँधी हुई है, उसमें बैठ कर क्या तुम कहीं पहुँच सकते हो? थोड़ा आगे जा कर फिर उसी जगह आ जाओगे। ऐसे ही भार्या, पुत्रादि से बँधे हुए भगवत् प्रीति की कोशिश

करोगे तो क्या सफलता मिलेगी? थोड़ा आगे जा रहे हो ऐसा प्रतीत होगा; परन्तु तुम शीघ्र देखोगे कि तुम जहाँ थे वहीं हो।

× × ×

हम स्वयं अपने मित्र और शत्रु दोनों ही हैं। जब तक मन, वचन और कर्म से सत् धर्मानुसार रहोगे तब तक भय कैसा? अभयावस्था प्राप्त होगी। तुम्हारी शक्ति भी बढ़ेगी और जन्म भी सफल होगा।

× × ×

दूसरों को उपदेश करने के लिए सब बड़े समर्थ है; परन्तु अपने दोषों को देखने और उनको दूर करने का प्रयास करने वाले बहुत ही कम हैं। अंग्रेजी में कहावत है: *'Physician heal thyself first'*—भिषगवर! पहले तुम अपने रोग का शमन करो।

× × ×

अपना जीवन बनावटी नहीं वास्तविक रखो।

●

काम और क्रोध

यदि घर के अन्दर साँप हो तो क्या तुम शान्ति से रह सकोगे? रात को बिलकुल नींद नहीं आयेगी। साँप को बाहर भगाने पर ही शान्ति से सो सकोगे। कामादि विकार जब तक तुममें रहेंगे तब तक तुम शान्ति से सो नहीं सकोगे। कामादि विकारों से मुक्त हो जाओ। सुखी रहोगे।

× × ×

ज्ञान-रत्न को हरने के लिए काम-क्रोधादि सदैव अवसर ढूँढ़ते रहते हैं । सावधान नहीं रहोगे तो ये उसका अपहरण करके तुम्हें बड़ी आपत्ति में डाल देंगे । अतः सदा सावधान रहो ।

× × ×

सदैव सावधान रहो । काम-क्रोधादि चोर तुम्हारे ज्ञान-रत्न को छीनने के लिए अवसर देखते रहते हैं । जहाँ तुम्हारी आँख झपकी कि सब गड़बड़ हो जायगा ।

× × ×

जलती हुई आग में पड़ कर पतङ्गा तुरन्त जल कर भस्म हो जाता है । ऐसे ही कामनियों के वस्त्राभूषण पर मोहित होकर कामी लोग नष्ट हो जाते हैं ।

× × ×

काम को जीतने का प्रयास करो और अपना कर्त्तव्य सुचारु रूप से करो ।

× × ×

मनुष्यों को पशुओं-सा जीवन नहीं रखना चाहिए । वे विचार करते हैं कि स्त्री उनकी काम-तृप्ति का एक यन्त्र मात्र है ।

× × ×

मनुष्य और पशुओं में अन्तर क्या है ? मनुष्य वह है जो आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन से ऊपर गया है । अन्यथा यह चारों बातें तो मनुष्य और पशु में समान हैं ।

× × ×

गृहस्थ जीवन बहुत सुन्दर है । उसको एक आदर्श जीवन बनाने के लिए नीचे लिखी शर्तें आवश्यक हैं :—

× × ×

(१) एक पत्नी-व्रत, (२) जो तिथियाँ स्त्री प्रसङ्ग के लिए वर्जित हैं, उनका पालन करना, (३) जब एक या दो सन्तति हो जाय तब स्त्री से भगिनी इत्यादि-सा सम्बन्ध रखे, पति-पत्नी सम्बन्ध समाप्त कर दे, तथा (४) जैसे किले के भीतर लड़ाई लड़ी जाती है वैसे गृहस्थाश्रम को समझना चाहिए । ब्रह्मचर्याश्रम किले के बाहर की लड़ाई है ।

× × ×

काम, क्रोधादि को नियन्त्रित करने के लिए एक प्रभावशाली उपाय है । जैसे ही ये विकार उठें तो किसी एकान्त स्थान में जाकर बैठ जाओ और भगवान् में मन लगाकर—'हरे राम, हरे राम, राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे'' मन्त्र का पाँच मिनट तक जप करो । तुम्हारा मन बिलकुल शान्त हो जायगा । इसमें सन्देह नहीं ।

× × ×

क्या तुम जानते हो कि तुम्हारे महान् शत्रु कौन हैं ? ये तुम्हारे भीतर रहने वाले काम और क्रोध ही हैं । इनको अग्नि में जला दो । यह अग्नि ज्ञान है और कुछ नहीं । 'मैं कौन हूँ' इसका बोध ही सच्चा ज्ञान है ।

× × ×

यदि तुम क्रोध करोगे तो सब-कुछ नष्ट हो जायगा । परन्तु यदि तुम अपनी भावना और शान्ति बनाये रहो तो यह तुम्हारे लिए प्रसन्नता की वस्तु बन जायगी । अपने को

सदा तटस्थ रखो। भगवान् से प्रार्थना करो कि वह तुमको तुम्हारे काम करने के लिए बल और बुद्धि दे।

●

अहं

सच्ची बात तो यह है कि हममें शक्ति है क्या ? छोटी अँगुली तक तो हिला नहीं सकते। फिर 'मैं' 'मैं' का अभिमान क्यों ? अच्छा या बुरा सब भगवान् की प्रेरणा से ही होता है। अतः अहङ्कार का सर्वथा त्याग कर उसकी शरण में जाओ।

× × ×

मेरी पत्नी, मेरा पति, मेरा बच्चा, मेरी सम्पत्ति ऐसे सब पदार्थों में 'मेरा, मेरा' का भाव रखने से भगवान् को देने के लिए वास्तव में हमारे पास कुछ रह ही नहीं जाता। इसके विपरीत यदि हम जो-कुछ अपने पास है भगवान् को अर्पण करें तो वह सब दुःखों का नाश कर के हमें मोक्ष का आनन्द प्रदान करेगा।

× × ×

जब तक मनुष्य में 'मैं', 'मैं' की भावना तथा प्रबल आसक्ति रहेगी तब तक वह मुक्त नहीं हो सकता। उसको कष्ट उठाना ही पड़ेगा। प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो।

× × ×

बहुत से लोग अभिमान किया करते हैं कि वे बड़े व्यक्ति हैं, विद्वान् हैं, मानी हैं। यह नाश का कारण बनता है। 'मैं

भगवान् का भक्त हूँ या दास हूँ'। ऐसा अहङ्कार कितना श्रेष्ठ है।

× × ×

अहं-भाव अच्छा भी है और बुरा भी। 'मैं बड़ा अफ़सर हूँ, बड़ा योग्य और चतुर हूँ। दूसरे सब मूर्ख हैं।' ऐसा 'अहं-भाव मनुष्य को पतन और नाश की ओर ले जाता है। 'मैं भगवान् का दास हूँ। जो कुछ भी योग्यता मुझमें है, वह सब प्रभु का ही प्रसाद है।' इस प्रकार का अहं-भाव मनुष्य को अपने भीतर सदा बनाये रखना चाहिए। ऐसा करने से उसमें दूसरों के प्रति सहिष्णुता और सहानुभूति आयेगी चाहें वे उसके शत्रु हों या दुष्ट लोग ही क्यों न हों।

× × ×

'मैं, मैं' का बहुत विचार करना बड़ा दोष है अन्यथा व्यक्ति बन्धन-मुक्त है। इस मिथ्या कल्पना को त्याग दो तो सब ठीक हो जायगा।

× × ×

'मेरा, मेरा' यह माया है। तुम कहते हो मेरी पत्नी, मेरी पुत्री, मेरा पुत्र इत्यादि। परन्तु जो वास्तव में 'तुम' है, वही केवल तुम्हारे साथ सदैव रहेगा। वह केवल तुम्हारी अपनी आत्मा ही है जो प्रेम और आनन्द से परिपूर्ण है। एक नियुक्त सेवक (*Trustee*) की तरह स्त्री, पुत्र और अन्य लोगों के प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करो। उनमें 'मैं, मेरा' भाव का आरोप मत करो। इससे तुम इतनी अधिक आसक्ति से बच जाओगे। इस पर विचार करो—निरन्तर विचार करो। भगवान् का स्मरण करो और जप करो।

× × ×

मूर्ख लोग ही अपनी बुद्धिमानी का गर्व करते हैं । प्राचीन अथवा वर्त्तमान् काल के महापुरुषों के सामने उनकी गिनती है क्या ? हमारा कर्त्तव्य यह न होना चाहिए कि हम उनकी हँसी उड़ाए बल्कि उनकी बात समझने का प्रयास करें ।

× × ×

हमें आत्म-सम्मान रखना चाहिए, अभिमान नहीं ।

●

साधना

तुम चाहते क्या हो ! तुम्हारी तीव्र इच्छा या आवश्यकता क्या है, इसका क्या तुमको स्पष्ट ज्ञान है ? तुम स्वभाव से भावुक हो । भक्ति-मार्ग तुम्हारे लिए बहुत उपयुक्त है । जगज्जननी के भव्य स्वरूप का ध्यान करो, बड़ी श्रद्धा और भक्ति से पूजा, अर्चना, स्तोत्र-पाठ, नमस्कार इत्यादि करो और मन्त्र जप करते जाओ । भक्ति को बढ़ाने के ये उपाय हैं । वास्तविक अस्तित्व की थोड़ी कल्पना भी आवश्यक है जिससे भक्ति दृढ़ और सुरक्षित बनी रहे । अन्यथा उसका अन्त केवल भावुकता में ही होना सम्भव है । तुमने मुझसे वसिष्ठ गुहा में बहुत सी बातें सुनी हैं । यदि तुम उनमें से कुछ का भी स्मरण रखने का प्रयास करो और उन का बारम्बार मनन करो तो मार्ग सुगम हो जायगा ।

× × ×

तुमको अपना मन सांसारिक विषयों में रखना है या अध्यात्म में, इसको तुमको स्वयं चुनना है । जब एक बार इन भौतिक विषयों के नश्वर होने का ज्ञान हो जायगा तो ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इनमें मन को लगायेगा । फिर भी माया और वासना बड़ी प्रबल हैं । ये तुम्हें बार-बार सत्य-मार्ग से हटाने का प्रयत्न करेंगी । इनसे बचने के लिए बहुत बड़ी शक्ति और दृढ़ता चाहिए । यदि प्रभु के प्रति तुम्हारी भक्ति सच्ची और श्रद्धापूर्ण होगी तो तुमको वह शक्ति प्रचुर मात्रा में प्राप्त होगी ।

× × ×

जब तुमको ध्यान करने में कठिनाई हो तो जप, कीर्त्तन तथा अर्चना में लग जाओ । जैसे भी हो मन को आलस्य और तन्द्रा से हटाओ और सक्रिय बनाओ । सदा प्रसन्नचित्त और विनोदी रहो । सबसे प्रेम करो । विनीत और कोमल स्वभाव बनाये रहो । जो-कुछ भी करो उस पर नियन्त्रण रखो । बहु-भाषण में निरर्थक समय मत नष्ट करो ।

× × ×

भगवान् को न भूलो । उसका चिन्तन करो । यदि मन्त्र में रुचि नहीं है तो उसको छोड़ो । कुछ अच्छे ग्रन्थ जैसे गीता, रामायण इत्यादि का अध्ययन करो । जीवन ठीक रखो । सावधान रहना । बुरी सङ्गत में मत पड़ना । अपने कर्त्तव्य का सुचारु रूप से पालन करना ।

× × ×

जहाँ तक स्वरूप का प्रश्न है, जगज्जननी का स्वरूप क्यों न लो अथवा शिव के शान्त स्वरूप का, प्रकाश का, महात्माओं

अथवा अन्य किसी भी स्वरूप का ध्यान कर सकते हो। हमारे विचार भी आकार रखते हैं।

× × ×

तुमको रामायण-पाठ, कीर्त्तन, जप इत्यादि में रुचि है तो उनमें लगे रहो। निराश न होओ। जगदम्बा के भव्य स्वरूप का ध्यान, जप, भजन, कीर्त्तन तथा प्रार्थना करते रहो। संसार में अनासक्त भाव से रहो। यह निरन्तर स्मरण रखो कि यह जगत् मिथ्या ही है और इससे विशेष लगाव मत रखो। स्तोत्र-पाठ, जप इत्यादि से, सत्सङ्ग और अच्छी पुस्तकों द्वारा भगवत्-प्रीति को अधिकाधिक बढ़ाते रहो। श्री रामकृष्ण परमहंस के वचनामृत पाठ करने की मैं सम्मति देता हूँ।

× × ×

सगुण उपासना के बिना निर्गुण उपासना सम्भव नहीं है। बाह्य पूजन भी बिलकुल आवश्यक है।

× × ×

जब तक हमको निराकार पूजन की समझ नहीं होती तब तक हम साकार पूजन करने को विवश हैं। देवालय में जन्म लेना ठीक है; परन्तु उसमें मरना अच्छा नहीं।

× × ×

सूर्य-ग्रहण इस वर्ष २० जून को प्रातःकाल ७ बजे से १० बजे तक पड़ेगा। इसके प्रभाव की तुम स्वयं परीक्षा कर सकते हो। प्रातः ७ बजे से पहले ही स्नान करके खाली पेट एकान्त स्थान में बैठ जाओ और ध्यान करो। ये भौतिक घटनाएँ मन

के ऊपर विशेष प्रभाव रखती हैं। विवेकी लोग इनका सर्वोत्तम उपयोग करते हैं।

× × ×

मनुष्य को बचपन से ही साधना करनी चाहिए। वह जब वृद्धावस्था को प्राप्त हो जायगा तब क्या कर सकेगा? तब तो वह इच्छाओं का दास हो जायगा।

× × ×

मध्य रात्रि में जब वातावरण शान्त हो तब उठो और अपने हृदय को प्रभु के समक्ष उँड़ेल दो। गपशप से बचो। मन को सदा अचञ्चलता से प्रभु में लगाओ। जब मन भावपूर्ण है तो हम वार्त्तालाप कैसे कर सकते हैं? हृदय को प्रभु से—केवल प्रभु से परिपूर्ण रखो।

× × ×

नवरात्रि आजसे शुरू हो रही है। घर को साफ-सुथरा रखो। रोज दोनों समय पूजा उन मन्त्रों से करो जिनका मैं तुम्हारे साथ पाठ करता था।

× × ×

वैदिक रीति से रुद्राभिषेक, पूजा और पाठ करने से घर का वातावरण शुद्ध हो जाता है। दूसरे भी तुम्हारा अनुकरण करें। यह कल्याणकारी होगा। हिन्दुओं के दुःख का कारण यही है कि उन्होंने पूजा, हवन, यहाँ तक कि सन्ध्या करना तक छोड़ दिया है।

× × ×

पूजन के लिए एक स्थान अलग रखो। उसको बहुत साफ-सुथरा रखो। उसमें नियमपूर्वक शिव और शक्ति का पूजन करने का प्रबन्ध करो। परिवार के सब सदस्य आरती, भजन, कीर्त्तन इत्यादि में भाग ले सकते हैं। यदि ऐसा प्रतिदिन नियमपूर्वक, बड़ी श्रद्धा-भक्ति से किया जाय तो घर देवालय बन जायगा—सचमुच शुद्ध वातावरण से परिपूर्ण देवालय बन जायगा। जगज्जननी के आशीर्वाद से धीरे-धीरे पूरा परिवार बदल जायगा।

× × ×

नित्यप्रति निश्चित समय पर भगवान् का पूजन और प्रार्थना करो। उससे अधिक से अधिक प्रेम बढ़ाओ। तब तुम सब सांसारिक आसक्तियों से मुक्त हो जाओगे।

× × ×

भगवान् का तीव्र भावना से चिन्तन करो। कुछ और वैदिक स्तोत्र जैसे पुरुषसूक्त, शान्ति-पाठ इत्यादि का पाठ करो। हर रविवार को पूरे परिवार-सहित थोड़ा हवन भी करो।

× × ×

प्रतिदिन कोई धार्मिक ग्रन्थ, जैसे रामायण, गीता इत्यादि का अध्ययन करने में मत चूको।

× × ×

भगवान् परम दयालु और करुणामय है। वह हमारा सच्चा पिता, माता, सब-कुछ है। इस तथ्य को समझो और उसमें श्रद्धा रख कर अपनी पूरी योग्यता के साथ अपना कर्त्तव्य करते

जाओ। वह तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करेगा और तुम्हारा उद्धार करेगा। 'चिन्ता-मुक्त' से मेरा यही मतलब है। इससे तुमको चेतना और शक्ति मिलेगी।

× × ×

हर रात्रि को सोने के पहले उस दिन के किये हुए कर्मों का हिसाब लगाओ। यदि कोई अनुचित कर्म किया हो तो उसका पश्चात्ताप करो और भविष्य में ऐसा न करने का दृढ़ निश्चय करो। निष्कपट भाव से भगवान् से इसके लिए बल प्रदान करने की प्रार्थना करो।

× × ×

रात को सोने के पहले थोड़ी देर बैठो। दिन में क्या-क्या किया है उसका विचार करो। अपने विचारों को अपनी अन्तरात्मा तक पहुँचाओ और निवेदन करो कि तुम क्या-क्या चाहते हो। भगवान् से सत्यनिष्ठा से ऐसी प्रार्थना करके सो जाओ। 'असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय' मन्त्र का जितनी बार हो सके जप करो। तुम कोई अपनी निजी प्रार्थना भी कर सकते हो।

× × ×

एक ही आसन में बहुत देर तक सीधे बैठने का अभ्यास करो। आहारादि में नियमित रहो। कई रोगों से मुक्त और सुखी रहोगे।

× × ×

आध्यात्मिक जीवन में केवल निष्कपटता आवश्यक है।

× × ×

निष्कपट और सच्चे बनो। भगवान् तुमको दुःख और सङ्कट से बाहर निकाल कर परमानन्द में पहुँचा देगा। यदि तुमको अपने सद्गुरू की उपस्थिति का भान होता हो तो यह पर्याप्त है। अपना कर्त्तव्य सुचारु रूप से करो।

× × ×

प्रातः जल्दी उठो, प्रातः तीन बजे उठना सर्वोत्तम है। यह ब्राह्ममुहूर्त्त है। ईश्वर-चिन्तन के लिए, स्वाध्याय के लिए अथवा किसी गम्भीर विषय पर विचार के लिए भी यह ब्राह्ममुहूर्त्त बहुत अच्छा है। केवल जागते रहोगे तो भी तुम्हें मानसिक शक्ति मिलेगी।

× × ×

अध्यात्म में प्रगति करने के लिए स्थान भी एक आवश्यक साधन है। यदि कोई यह समझे कि उसे पारिवारिक वातावरण में डूबे रहने पर भी सब-कुछ प्राप्त हो जायगा तो वह धोखा खा रहा है। इसलिए जब उसकी उत्कण्ठा जाग्रत होगी तो उसे इस वातावरण से अलग होना ही पड़ेगा।

× × ×

तुमको अवश्य विकसित होते जाना चाहिए। प्रति-दिन प्रति-घण्टे अपने विकास को सावधानी से देखते रहो।

× × ×

ईश्वर-भक्ति उन लोगों के लिए नहीं है जिनको बहुत-सी वस्तुओं की चाह है जैसे धन, स्त्री इत्यादि। इच्छा का पूर्ण अभाव होना चाहिए। पूर्ण सन्तोष—किसी भी पदार्थ की लालसा न हो।

× × ×

जहाँ तक आप्त पुरुषों का प्रश्न है, उनके मार्ग में अन्तर हो सकता है, पर लक्ष्य एक ही है। जो मार्ग तुमको अनुकूल हो, उसको ग्रहण करो। प्रत्येक व्यक्ति परमोच्च पद को प्राप्त कर सकता है यदि वह उसके लिए प्रयत्नशील हो।

× × ×

अँग्रेजी में कहावत है *"No pains, no gains"* बिना परिश्रम किये लाभ नहीं हो सकता। महापुरुषों ने रात-दिन कठोर परिश्रम करके उच्चातिउच्च स्थिति को प्राप्त किया है जबकि दूसरे लोग निद्रा में पड़े थे। जब कोई व्यक्ति अथक परिश्रम करके बी. ए. की डिग्री प्राप्त करता है तो वह नीचे के सभी दर्जों से ऊपर हो जाता है, परन्तु उसको दूसरों का तिरस्कार करने का अधिकार नहीं है। सच्चा शिक्षक उत्साह ही बढ़ायेगा। ध्वंसात्मक मार्ग भयावह है जबकि रचनात्मक मार्ग हितकर है। हमारे बड़े दूरदर्शी ऋषियों ने उस उच्च स्थिति को प्राप्त करके सबके लिए उपयोगी मार्ग निर्धारित किये हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उन मार्गों में से कोई एक मार्ग चुन लें और उसका अनुसरण करें। सत्य सत्य ही है। हमको सत्य तक पहुँचना है जो 'एकमेवाद्वितीयम्' है। एक दम से कोई भी उस पवित्र स्थिति तक नहीं पहुँच सकता। गुरु का होना अनिवार्य आवश्यकता है।

× × ×

ईश्वर-भक्ति तभी आरम्भ होती है जब भौतिकता अस्त होती है। तुम यह ध्यान रखो कि तुम भौतिकता की ओर जा रहे हो या इससे दूसरी ओर। अपना एक ध्येय निश्चित करो और उसको प्राप्त करने का प्रयास करो।

एक सात वर्षीय कन्या पति-पत्नी के प्रेमालाप का मूल्याङ्कन नहीं कर सकती। इसके लिए उसको तरुणावस्था प्राप्त करनी होगी। कोई एक दम मे शिखर पर नहीं पहुँच सकता। स्वामी विवेकानन्द जी ने बताया है कि व्यक्ति को शनैः शनैः ही विकास करना है। प्रगति के लिए धर्मभीरुता होनी आवश्यक है। सच तो यह है कि सारे नाम और आकार मिथ्या हैं। केवल एक 'वही' है दूसरा नहीं—'एकमेवाद्वितीयम्'। हे श्वेतकेतु ! तुम वही हो। प्रगति करते चले जाओ। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करो।

× × ×

अपने लक्ष्य को ध्यान में रखो और निरन्तर पुरुषार्थ करो।

× × ×

सबसे उत्तम आध्यात्मिक उपदेश वही हैं जिनसे पूर्ण शान्ति बनी रहे और उनके फलस्वरूप निश्चल नीरवता प्राप्त हो।

× × ×

अपने आदर्श को मत भूलो। तुमको अपने जीवन को इस तरह ढालना है कि जिससे हमेशा के लिए शान्ति और स्थिरता प्राप्त हो। गीता के उपदेशों का मनन करो और उन पर अमल करो।

× × ×

आम का फल जब पूरी तरह से पेड़ पर पक जाता है तो उसे बरबस भूमि पर गिरना पड़ता है। मस्तिष्क जब परिपक्व हो जाता है तो प्रभु की ओर उसकी गति निर्बाध हो जाती है।

जितना ही मनुष्य प्रभु की भक्ति में निमग्न होता जाता है सांसारिक विषयों में उतनी ही कम प्रवृत्ति होती जाती है। अतः अपनी भक्ति-साधना में अग्रसर होते रहो।

× × ×

वास्तव में हमारे माने हुए सारे कर्त्तव्य तुच्छ हो जाते हैं जब हमारे भीतर अन्तिम सत्य को जानने की और प्रभु के चरणारविन्दों में सदा-सदा के लिए रह कर आनन्द में डूबे रहने की प्रचण्ड उत्कण्ठा उत्पन्न हो जाती है। यह बुद्धिमान् और दृढ़ निश्चयी लोगों का पथ है। भ्रम और आवेगों से बहकना नहीं चाहिए। एक-एक डग दृढ़ता से रखना चाहिए।

× × ×

साधना-पथ में केवल सत्यनिष्ठा की ही आवश्यकता है। यदि व्यक्ति सत्यनिष्ठ है तो उसकी सत्यनिष्ठा ही भिन्न-भिन्न साधनों से उसे लक्ष्य तक पहुँचा देगी।

× × ×

भगवान् ही वास्तव में हमारा सच्चा पिता, माता, धन और सब-कुछ है। वह हमको सदैव अपने में सम्मिलित करना चाहता है। 'त्वमेव सर्वं मम देवदेव'—'हे प्रभु ! तुम—केवल तुम ही मेरे सर्वेसर्वा हो। तुम्हीं मेरे एकमात्र स्वामी हो।' जब व्यक्ति इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है तो वह बन्धनमुक्त हो जाता है।

× × ×

भगवच्चिन्तन को मन में सब विचारों में प्राथमिकता दो। यह तुमको अपने-आप लक्ष्य तक पहुँचा देगा।

× × ×

हमारा कर्त्तव्य उसका ध्यान और उस पर पूर्ण विश्वास रखना है। वह हमको छोड़ेगा नहीं। अपने मन को उस प्रभु में केन्द्रित रखो। केवल वही सत्य है और सब मिथ्या। अपने मन को उसमें दृढ़ रखो।

× × ×

वे लोग भाग्यवान् हैं जो प्रभु को बाहर नहीं अपने अन्दर खोजते हैं। तब बाहर और अन्दर एक हो जाता है।

× × ×

शिव का वास्तविक स्थान भीतर है। उनका पूजन अपने हृदय में करो। अपना सारा कर्म उनके समर्पण करो।

× × ×

गीता क्या है? सचमुच वह अमृत से बढ़ कर है। परन्तु उसका रसास्वादन कौन कर सकता है?

× × ×

प्रभु से तुमको जो सारे लाभ प्राप्त होते हैं उनके लिए प्रभु के प्रति कृतज्ञ रहो। उसके सामने अपने हृदय को खोलो। जो-जो अपराध और भयङ्कर भूलें तुमने की हैं, उनको स्वीकार करो, उनके लिए पश्चात्ताप करो। प्रार्थना में अद्भुत चमत्कार है। तुम स्वयं अनुभव करोगे कि तुम्हारी प्रार्थना परिणाम बिना नहीं रहेगी।

× × ×

आध्यात्मिक जीवन कोई खिलवाड़ नहीं है। व्यक्ति अपनी उन्नति को सावधानी से तभी देख सकता है जब वह अलग एकान्त में जीवन व्यतीत करे।

जब तुम्हें तीन-चार दिन का अवकाश मिले तब यथासम्भव मौन रहो। अपना पूरा ध्यान पूजा तथा जप द्वारा उस 'एक' में—भगवान् में लगाओ। तुम अपने में स्वयं परिवर्त्तन अनुभव करोगे।

× × ×

एक काम करो। सप्ताह में एक दिन शान्त अज्ञातवास करो। प्रातः बिना किसी से मिले हुए अकेले घर को छोड़ दो। भोजन के लिए कुछ अपने साथ ले लो और किसी नदी-तट पर शान्त, छायादार स्थान पर चले जाओ। वहाँ स्नानादि से निवृत्त होकर पूजा, जप इत्यादि में लग जाओ। पूरा दिन और हो सके तो रात्रि भी वहीं व्यतीत करो। फिर प्रसन्नचित्त से घर लौट आओ। ऐसा करते चले जाओ। तुमको अपने में स्वयं अन्तर अनुभव होगा।

× × ×

मौन सर्वोत्तम वाणी है।

× × ×

भगवान्—आनन्द-स्वरूप, वैभवपूर्ण जब तुम्हारे हृदय में है है तो कैसा भय, कैसी उदासी तथा कैसा विषाद? पूजा सुचारु रूप से करते जाओ।

× × ×

यदि कोई भूखा है तो उसे किसी-न-किसी तरह भोजन प्राप्त हो ही जायगा।

× × ×

सत्कर्म के द्वारा ईश्वर को प्रसन्न करो। ईश्वर की प्रीति से सबकी प्रीति मिल जायगी।

× × ×

मन को अधिकाधिक धार्मिक पथ में लगाओ।

× × ×

भगवान् पर भरोसा रखो और सही काम करो। यदि इस सूत्र का पालन करोगे तो सब ठीक रहेगा।

× × ×

आध्यात्मिक क्षेत्र में पर्याप्त बल प्राप्त करो।

× × ×

भगवत्-सत्ता में जीवन यापन करना सचमुच एक गौरव है।

× × ×

बाह्य पूजन बड़ी विधि-विधान और ठाटबाट से करना जन-साधारण के लिए है। आवश्यकता तो इस बात की है कि हम अपने हृदय को मन्दिर बनायें और उसमें गुरुदेव को स्थापित करें।

× × ×

मैं केवल पवित्रता और शक्ति पर बल देता हूँ। अध्यात्म में श्रुतियाँ सर्वोच्च प्रमाण रखती हैं। यदि तुमको उन पर विश्वास नहीं है तो मुझे अध्यात्म के विषय में तुमसे कुछ भी कहना नहीं है। यह आत्मा जो सत्य है सत्यनिष्ठा, सत्य, तपस्या (मन और इन्द्रियों का संयम), यथार्थज्ञान और ब्रह्मचर्य से जानी जा सकती है। जब तक व्यक्ति इन गुणों को प्राप्त नहीं करता तब तक उसके लिए कोई आशा नहीं है। यह मेरा सत्य और दृढ़ मत है।

× × ×

भगवान् की शरण में जाओ। जीवन बदल जायगा।

× × ×

संसार और भगवान् दो विपरीत छोर हैं। जितना अधिक तुम प्रभु में आसक्त हो जाओगे उतनी ही आसक्ति संसार के प्रति कम हो जायगी और यही आध्यात्मिक जीवन की कसौटी है।

× × ×

सम्पूर्ण साधना का उद्देश्य सांसारिक वातावरण से मुक्ति पाना है। तुमको अपने आपको जाँचना है कि तुम अधिकाधिक भगवान् की ओर या संसार की ओर जा रहे हो। तब प्रभु से प्रार्थना करो कि वे तुम्हें उचित मार्ग पर ले चलें।

× × ×

भगवान् बड़ा दयालु और करुणामय है। पूजा, रामायण-पारायण करते रहो। भगवान् का स्मरण ही एकमात्र मार्ग है।

× × ×

चिन्ता एक व्याधि है। यह शरीर को सुखा देती है। भगवान् के चिन्तन से इसका नाश करो। तुम सुखी हो जाओगे।

× × ×

अंग्रेजी में एक कहावत है कि *All that glitters is not gold*—हाथी के दाँत दिखाने के और, और खाने के और होते हैं। जो दूसरों को धोखा देते हैं उनको स्वयं धोखा उठाना पड़ता है। तुमको व्यर्थ ही इतना कष्ट उठाना पड़ा—व्यर्थ ही नहीं। तुमको इससे कुछ अनुभव तो हुआ ही।

× × ×

संस्कृत पढ़ना अच्छा है। इससे तुम अध्यात्म के ठीक उद्गम-स्थान तक पहुँच सकते हो। शक्ति, शक्ति, हमको यही चाहिए। परन्तु यह शक्ति प्राप्त कैसे हो ? उपनिषदों का समर्थन करो।

× × ×

मान लो कि तुम अंग्रेजी नहीं जानते और मेरे (अंग्रेजी में लिखे) पत्र का कोई अनुवाद करके तुम्हें बताये तो ऐसे अनुवाद में मौलिक पत्र का सारा सौन्दर्य और प्रभाव लोप हो जाता है। सारे मन्त्र संस्कृत में ही हैं। उनमें शक्ति, चेतना निहित है। इसलिए यदि तुम मूल मन्त्र को लो तो तुम्हारे लिए बहुत लाभकारी होगा। तुम थोड़ी संस्कृत भी पढ़ो। गीता, उपनिषद् को समझने के लिए संस्कृत का ज्ञान अनिवार्य है। तुम उसे जल्दी सीख सकोगे।

× × ×

बराबर निर्मल बनो। पवित्रता तुमको शक्ति और बुद्धि देगी। सभी सांसारिक प्रलोभनों का दृढ़ता से अविरोध करो। मनुष्य को केवल यही आध्यात्मिक साधना करनी है।

●

ध्यान तथा जप

श्री रामकृष्ण परमहंस जी का उपदेश तुमको स्मरण होगा। सन्ध्या गायत्री में लीन होती है और गायत्री 'ॐ' में। सन्ध्या से तुम स्थिर और अचञ्चल होकर अपने को गायत्री-जप हेतु तैयार करते हो और गायत्री से अर्थात् उस पवित्र मन्त्र का

अर्थ समझ कर, जप और ध्यान करके तुम 'ॐ' का उच्चारण करने और समझने के योग्य बनते हो। जब तुम्हारा मन 'ॐ' में दृढ़ हो जायगा तो तुमको और कुछ करना रह ही नहीं जायगा। तुम बन्धनमुक्त हो जाओगे।

× × ×

गायत्री-मन्त्र कितना सुन्दर है; परन्तु हिन्दुओं ने अब उसे खो दिया है। इस मन्त्र के अर्थ को समझो। यदि तुम उसका तत्परता से जप करोगे तो उससे जो चाहोगे वह प्राप्त होगा।

× × ×

गायत्री-मन्त्र को ही लो। महामना मदनमोहन मालवीय जो हवन के साथ केवल गायत्री-मन्त्र पर दृढ़ रहे।

× × ×

गत वर्ष एक सज्जन मुझे अमृतसर ले गये थे। उनका जीवन अब राजकुमारों जैसा है। पहले वे एक छोटे दुकानदार थे। उन्होंने हवन-सहित गायत्री-मन्त्र की साधना की और मुझे बताया कि वे पाँच करोड़ जप कर चुके हैं। उनके मकान पर एक यज्ञशाला भी है जिसको बहुत लोग पसन्द करते हैं।

× × ×

स्त्रियाँ भी गायत्री-मन्त्र का जप कर सकती हैं, पर तभी जब वे इसके लिए उत्सुक हों। उनके पति उनसे दासीतुल्य व्यवहार करते हैं और पूजन-अर्चन में भी उनको थोड़ी स्वतन्त्रता नहीं मिलती। विधवा स्त्रियों की स्थिति भिन्न है। उनको पूरी दृढ़ता से अपने जीवन को भगवान् के चरणारविन्दों में समर्पित करना चाहिए।

× × ×

उनको निरन्तर जप करते रहना चाहिए। सदैव पवित्र जीवन बनाए रखना चाहिए। यदि तुमको उनसे सहानुभूति हो तो तुम भी उनको गायत्री-मन्त्र का जप करने का सुझाव दे सकते हो। उनके लिए यह अति-उत्तम है; परन्तु ऋतुकाल में उन्हें जप नहीं करना चाहिए।

× × ×

गायत्री-मन्त्र को अपनाओ। वह तुमको तुम्हारे लक्ष्य तक ले जायेगा। यदि ठीक से गायत्री-जप किया जाय तो उससे तुमको स्वास्थ्य, धन और शान्ति प्राप्त होगी तथा तुमको डाक्टरों के पास नहीं जाना पड़ेगा। अपने घर में एक स्थान पर हवन-कुण्ड भी बना लो। प्रातःकाल जितना कर सको इस मन्त्र से हवन करो। इससे तुम्हारा पूरा घर और आस-पास का स्थान भी एक सीमा तक पवित्र हो जायगा। तुमको मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य-लाभ होगा। यह एक सरल काम है और यदि सब लोग अथवा कुछ लोग भी इस प्रकार अग्निहोत्र करने लगें तो इस संसार को स्वर्ग बना सकते हैं।

× × ×

जब तुम गायत्री-मन्त्र का जप करो तो उसके अर्थ का भी विचार करो। उसमें पूर्ण भाव बनाये रहो। मन का उस भाव के साथ ऐक्य करो। जब भी अनुकूल हो, थोड़ा हवन भी करो।

× × ×

सन्ध्या इत्यादि करने से तुम्हारा मन उत्तरोत्तर शुद्ध होता जाता है और तुम हर वस्तु को बहुत सरलता से समझ और ग्रहण कर सकते हो। तुम्हारी स्मरण-शक्ति भी तीव्र हो जाती है।

जप, अर्चना, प्रार्थना इत्यादि मन को भगवान् की ओर ले जाने के साधन हैं। हमारे ऋषियों ने घोषित किया है कि आध्यात्मिक जीवन तलवार पर नङ्गे पाँव चलना है।

× × ×

रामायण बहुत ही सुन्दर ग्रन्थ है। जब भी सुविधा हो इसको पढ़ा करो। गोस्वामी तुलसीदास जी तुम्हारे मन को स्फूर्ति प्रदान करेंगे।

× × ×

जिनको तुलसीदास जी की रामायण से, कीर्त्तन, जपादि से अनुराग है उन्हें उनको अपनाकर आगे बढ़ना चाहिए। हतोत्साह होने का कोई कारण नहीं है। परम पिता या जगदम्बा के नाम-स्मरण को, उनके भव्य-स्वरूप के ध्यान को अपनाओ और उनका नाम गाते और प्रार्थना करते जाओ। संसार से विरक्त जीवन बिताओ। तुमको यह स्मरण रखना है कि यह सारा जगत् मिथ्या मिथ्या ही है और उसमें बहुत ममता मत रखो। कीर्त्तन, जप तथा स्तोत्र से, अच्छे लोगों के सङ्ग से और सद्ग्रन्थों द्वारा भगवद्-भक्ति को बढ़ाते रहो। श्री रामकृष्ण परमहंस के वचनामृत को पढ़ो।

× × ×

मेरी समझ में नहीं आता कि व्यक्ति किस तरह का ध्यान करता है। यदि वह भगवान् के साकार रूप का, जसे माँ दुर्गा इत्यादि का, स्मरण और पूजन करता है तब मिथ्या अहन्ता के लिए कोई भी स्थान नहीं रह सकता। तुम्हारी भक्ति ही तुम्हें प्रेम तथा अनन्य शान्ति प्राप्त करा देगी।

× × ×

जप में देह, मन और मन्त्र का उच्चारण तीनों का सामञ्जस्य होना चाहिए। यदि कोई केवल जप करे, पर मन उसके साथ न रहे तो ऐसा जप केवल एक शारीरिक व्यायाम मात्र रह जायगा। 'ॐ' सामान्य मन्त्रों की श्रेणी में नहीं आता। 'ॐ' अनन्त शक्ति का प्रतीक है जो जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं में व्याप्त रहता है और उसका अनुभव तुरीयावस्था में साक्षी-भाव से होता है। साधक जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं से ऊपर चतुर्थ अवस्था में पहुँचाया जाता है जहाँ केवल आत्मा ही रह जाती है और कुछ नहीं—कुछ भी नहीं रहता। ऐसा ध्यान करने के लिए साधक में कुछ योग्यता होनी चाहिए। किसी को विश्वविद्यालय की डिग्री एकदम ही नहीं मिल सकती। शिशु-कक्षा से आरम्भ करो। ध्यान शक्ति है, ज्ञान है, तथा विवेक है। ध्यान शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार के समस्त रोगों की सर्वोत्तम औषधि है।

× × ×

"अच्युतानन्द गोविन्द नामोच्चारण भेषजात्।
नश्यन्ति सकलाः रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥"

'अच्युतानन्द गोविन्द' बड़ा सिद्ध मन्त्र है, बड़ी औषधि है। इसके उच्चारण से सब रोग नाश होते हैं। इस मन्त्र का सदा जप करते रहो।

× × ×

आज दुर्गा-अष्टमी है। दुर्गा का अर्थ है सर्वोच्च सत्य जिसको जान लेने के बाद कुछ जानना रह ही नहीं जाता। दुर्गा आत्मा या ब्रह्म है। दुर्गा का मूल अर्थ है कि जो मनुष्य को सब आपत्ति और कठिनाई से मुक्त कर दे। यदि कर सको तो तुम दुर्गा-सप्तशती का भी अध्ययन करो। उसका अर्थ गूढ़ है। बार-बार

पढ़ने पर ही उसका अर्थ समझ में आ सकता है। लोगों ने संस्कृत की उपेक्षा कर दी है। वे गूढ़ अर्थ को कैसे समझ सकते हैं?

× × ×

अंग्रेजी में एक कहावत है *'Slow and steady wins the race'*—धैर्य और दृढ़ता बनाये रखने से काम बन जाता है। एकदम से तुमको पूर्ण एकाग्रता की आशा नहीं करनी चाहिए। बारम्बार पुरुषार्थ करो। भगवान् तुमको उत्तरोत्तर ऊपर उठाता चला जायगा।

× × ×

अपने मन को प्रभु में रमा दो। तुम आनन्द—केवल विशुद्ध आनन्द में ही रहोगे। तुम आनन्द-सागर में निमग्न हो जाओगे। भगवान् को अपने हृदय में सर्वोच्च स्थान दो तब ध्यान लगाना सुगम हो जायगा। हाँ, भगवान् को प्रेम, सम्मान और भक्ति में सर्वश्रेष्ठ स्थान दो। साधना पूरी हो जायगी।

× × ×

पार्वती-सहित शिव को अपने हृदय में स्थापित करो। उनके सुन्दर स्वरूप का ध्यान करो और जप करते जाओ। ध्यान के साथ इस प्रकार का जप बहुत लाभदायक होगा। जप की सङ्ख्या बढ़ाते जाओ। २१, ६०० बार जप प्रतिदिन हो सके तो उत्तम है। इसका सतत प्रयत्न करो। प्रभु तुम्हें सहायता देंगे। सदा जप के अर्थ पर ध्यान रखना।

× × ×

जप आरम्भ करने के पहले किसी शान्त स्थान में बैठ जाओ और प्रभु का ध्यान करो। एक देदीप्यमान ज्योति का

ध्यान करो और शिव और पार्वती का, जो सारी चेतना के मध्य में विराजमान हैं ऐसा चिन्तन करो। तत्पश्चात् जप आरम्भ करो। उस दिव्य मूर्त्ति को अपने सामने लाने के लिए तुम्हें अधिक परिश्रम करना पड़ेगा।

× × ×

भगवान् के पुनीत नाम का जप करो। यह तुमको ज्यादा-से-ज्यादा शक्ति देगा।

× × ×

प्रभु को सदा अपने साथ रखने की उत्कृष्ट अभिलाषा रखो। इससे दूसरे सारे विषय शनैः-शनैः लुप्त हो जायेंगे। इष्ट-मन्त्र का जप करते रहो। इसका अभ्यास बना लो। इससे तुम निद्रा में भी जप करते रहोगे और वह तुम्हें लक्ष्य तक पहुँचा देगा। अपनी भक्ति को तीव्र बनाओ। फिर जो भी चाहोगे तुम्हें मिलेगा—भरपूर मिलेगा।

× × ×

'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि'—यज्ञों में मैं जप-यज्ञ हूँ ऐसा भगवान् का गीता में वचन है। इसलिए पद्मासन, सिद्धासन अथवा किसी आसन में भी सुख से बैठ कर भाव के साथ गुरु से प्राप्त मन्त्र का जप करो। जितना ही जप करोगे उतना ही अच्छा होगा। ईश्वर-साक्षात्कार के लिए यह सुगम और सबसे अच्छा साधन है; परन्तु जप बड़े प्रेम से होना चाहिए। जो भी आसन चुनो, उसमें स्थिरता से बैठने का अभ्यास करो। मन भगवान् में लीन हो जाना चाहिए।

भगवान् को भूलो मत। अपना मन्त्र-जप नियमित रूप से नित्यप्रति बड़ी भक्ति और तत्परता से करते रहो। भगवान् तुम्हारा ध्यान रखेगा।

कम-से-कम ध्यान, जप, पूजा इत्यादि करते समय तो अपने परिवार और संसार को भूल जाओ। भगवान् का निरन्तर चिन्तन करते रहो; क्योंकि वह सदा ही तुम्हारी अनेक प्रकार से सहायता करता रहता है।

ध्यान क्या है ?

आध्यात्मिक दृष्टि से 'ध्यान' का अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिससे पूरा मन सर्वशक्तिमान् भगवान् की ओर प्रेरित किया जाता है, जो भगवान् केवल एक है, अद्वितीय है सांसारिक लोग भी, जिनको उसमें विश्वास है, उसका चिन्तन और ध्यान अपनी कामना-पूर्त्ति के लिए करते हैं। भगवान् के प्रति उनकी भावना पूरी तरह से वैयक्तिक होती है। वह सर्वशक्तिमान्, पूर्ण करुणामय, दयालु और प्रेमालु है जो सदा उनकी प्रार्थना और कष्टों को सुनने के लिए उद्यत रहता है। अतः वे अपनी भौतिक उपलब्धियों के लिए उसकी आराधना करते हैं जैसे कि पत्नी, सन्तान, धन, सम्पत्ति, स्वास्थ्य, हैसियत इत्यादि। इस प्रकार की आराधना भी बुरी नहीं है, क्योंकि ऐसे आराधक उस श्रेष्ठ शक्ति का चिन्तन करते हैं जो कि सृष्टि में जो-कुछ भी नहीं, उसकी रचना और व्यवस्था करने वाली है। परन्तु इस प्रकार की आराधना सम्यक् नहीं है, क्योंकि ऐसे आराधक को उन भौतिक पदार्थों की असारता का ज्ञान नहीं होता जिनके लिए वे इतना परिश्रम करके उसकी आराधना करते हैं। जब आराधक पूरी सृष्टि का स्वामी बन सकता है तो उसको थोड़ी-सी नश्वर वस्तुओं के लिए, जो उसके पास सदा नहीं रहेंगी, गिड़गिड़ाना निरी मूर्खता है। अतः विवेकी लोग इस चारों ओर व्याप्त मायाजन्य संसार की असारता को समझ कर

भौतिक पदार्थों के लिए उसकी आराधना नहीं करते वरन् आध्यात्मिक उद्देश्य से करते हैं जिससे उनके सारे कष्ट सदा-सदा के लिए दूर हो जाएँ और वे मुक्त होकर सदैव के लिए भगवान् से सम्पर्क स्थापित करके शाश्वत आनन्द प्राप्त कर लें।

यह सत्य है कि 'उसका' कोई आकार नहीं है; परन्तु तुमको यह न समझना चाहिए कि वह अचेतन है। वह पूर्ण चिन्मय, ज्ञानमय है। उसको अपने भक्तों के ही कारण आवश्यकता पड़ने पर आकार ग्रहण करना पड़ता है। जो प्रारम्भिक अवस्था में हैं और अव्यक्त-भाव को नहीं समझ सकते, उनके लिए साकार आराधना एक अनिवार्य आवश्यकता है। साकार और निराकार दोनों ही प्रकार की अराधना में साध्य का स्वाभाविक गुण एक ही है। निराकार आराधना में उसको ब्रह्म कहते हैं और साकार आराधना में राम, कृष्ण, दुर्गा, ईसा इत्यादि। दोनों प्रकार की आराधनाओं में भक्त, भगवान् और भक्ति वर्त्तमान रहते हैं। साकार आराधना में रूप होता है फिर भी उस साकार रूप में सारभूत गुणों में लेशमात्र भी अन्तर नहीं है; क्योंकि साकार प्रभु, चाहे वह राम हो, कृष्ण हो अथवा कोई और हो वह, अपने भक्तों के लिए शाश्वत, सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञानमय, करुणामय और परमानन्दमय है।

तुम यह पूछ सकते हो कि फिर रूप ग्रहण करने की क्या आवश्यकता है ? जो लोग बुद्धि और ज्ञान में अधिक उन्नति कर गये हैं, उनके लिए साकार रूप की बिलकुल आवश्यकता नहीं है; परन्तु ऐसे लोग बहुत ही थोड़े हैं। अधिकतर लोग इसके बहुत पीछे हैं। वे इस अव्यक्त विचार-धारा को नहीं समझ पाते। अतः उनको व्यक्त रूप के पूजन, अर्चन की आवश्यकता होती है। साकार रूप की इसीलिए आवश्यकता है।

व्यक्ति को जब किसी वस्तु की उपयोगिता तथा महत्ता का ज्ञान हो जाता है तो उसका उसमें अधिकाधिक लगाव होता जाता है। राम, कृष्ण की अथवा किसी अन्य अवतार की लीलाओं को जनसाधारण समझ सकते हैं और जब वे उनकी कथाओं को सुनते हैं तो उनकी रुचि अपने इष्ट के प्रति बढ़ती है। इससे उनको अपने को सांसारिक आसक्ति से अलग करने और प्रभु-चरणों में अर्पण करने में सहायता मिलती है।

महान् स्वामी विवेकानन्द जी ने बताया है कि मन्दिर में जन्म लेना तो अच्छा है; परन्तु उसमें मरना बुरा है। इसका अभिप्राय स्पष्ट है। मन्दिरों और साकार रूपों से आरम्भ करना तो अच्छा है; परन्तु तुमको उसी स्थिति में जन्मभर रहना ठीक नहीं है। तुमको क्रमशः विकास करते जाना है जब तक कि तुम चरम सत्य तक नहीं पहुँचते जो कि वेदान्तियों का ब्रह्म है।

मैं तुमको बतलाता हूँ कि साकार रूप की आराधना करने वाले वेदान्तियों के ब्रह्म तक कैसे पहुँच सकते हैं। किसी भी प्रकार की पूजा में सत्यनिष्ठा अनिवार्यतः अत्यावश्यक है। यदि साधक अपनी साधना में सत्यनिष्ठ है तो प्रभु, जो कि उसकी आत्मा के सिवाय और कुछ नहीं है और जो हृदय की उत्कण्ठा को जानता है, उसको ऊपर उठाता चला जायगा और अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचा देगा। आरम्भ में साधक का राम केवल मन्दिर में ही था। शनैः-शनैः उसको विराट् पुरुष की आराधना की प्रेरणा मिलती है जिसके मुख, नेत्र, हाथ, पैर इत्यादि सब जगह हैं। छान्दोग्योपनिषद् के अनुसार इस प्रकार की उपासना को वैश्वानर उपासना कहते हैं। इस आत्मा—वैश्वानर—का सिर प्रकाशमय आकाश है नेत्र सूर्य हैं, जिससे सृष्टि

का प्रत्येक आकार दृष्टिगोचर होता है, प्राण वायु है जो हर दिशा में चलता रहता है, शरीर का पिण्ड आकाश है जिसका हर जगह विस्तार है, मूत्राशय विशाल जलाशय है, पाँव पृथ्वी हैं, हृदय-स्थल यज्ञवेदी है, शरीर का रोम कुश है, हृदय की गति गार्हस्पत्य अग्नि है, मन जठराग्नि है और मुख यज्ञाग्नि है।

हमको इससे यह शिक्षा मिलती है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि भगवान् का रूप है जिससे कि हम जिधर भी देखें हम उसको बाहरी वेश में देख कर उसी तरह स्मरण कर सकें जैसे कि प्रभु की भिन्न-भिन्न साकार प्रतिमाएँ हमको प्रभु का दर्शन कराने में सहायक होती हैं। प्रतिमा चाहे पत्थर, लकड़ी या धातु की हो, वह साधक को अपने इष्ट को स्मरण करने में सहायक होती है। इसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् भगवान् का एक विलक्षण और महान् रूप मानने से साधक को प्रभु को जानने और स्मरण करने में अवश्य सहायक होगा।

× × ×

मेडिटेशन (*Meditation*) को संस्कृत में ध्यान कहते हैं। ध्यान के बिना हम कोई भी काम ठीक से नहीं कर सकते। विद्यार्थी को यदि एक प्रश्न हल करने को दिया जाय और वह चुपचाप बैठा रहे तो वह उसको कैसे हल कर सकता है। उसको पूरा मन लगा कर उस पर विचार करना होगा। इसलिए यदि तुमको कोई भी काम ठीक से करना हो तो उस पर बारम्बार विचार करना चाहिए।

आध्यात्मिक दृष्टि से ध्यान भगवच्चिन्तन को कहते हैं। भगवान् का वास्तव में न कोई नाम है और न रूप, फिर भी वह अनेकों नाम और रूप ग्रहण करता है। प्रारम्भिक अवस्था वाले को भगवान् के सगुण रूप का ध्यान करना सबसे अच्छा है जैसे राम, कृष्ण, शिव, ईसा इत्यादि। आवश्यकता इस बात की है कि साधक में तीव्र उत्कण्ठा होनी चाहिए जैसे कि कामी पुरुष स्त्री का, लोभी धन का ध्यान करता है उसी प्रकार की उत्कण्ठा व्यक्ति को अपने में जाग्रत करनी चाहिए। मान लो कि तुम शराबी नहीं हो; परन्तु यदि तुम शराबियों से मिलने-जुलने लगे तो अव्वल नम्बर के शराबी हो जाओगे। इसी प्रकार यदि तुम भले और पवित्र लोगों से मिलने-जुलने लगे तो तुम धार्मिक हुए बिना नहीं रह सकते। इसी को सत्सङ्ग कहते हैं।

"सत्सङ्गत्वे निःसङ्गत्वं निःसङ्गत्वे निर्मोहत्वम्।
निर्मोहत्वे निश्चलभक्तिः निश्चलभक्तौ जीवन्मुक्तिः॥"

महापुरुषों की सेवा करने से सारा मोह और आसक्ति अवश्य मिट जाती है और तब भगवान् में दृढ़ विश्वास जमता है। तब तुमको किसी भी सांसारिक वस्तु की परवाह नहीं रहती—केवल इस संसार की ही नहीं यदि स्वर्ग ऐसी कोई वस्तु है तो उसकी भी। तुमने इनको ठुकरा दिया है और अब तुम मुक्त हो।

जो लोग ऐसा कर सकते हैं वे बड़े भाग्यवान् हैं। भगवान् ने गीता में बतलाया है कि "मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।" हजारों मनुष्यों में कोई ही ऐसा होता है जो बन्धन-

मुक्त होने के हेतु साधना करता है। अतः इस पर बारम्बार विचार करो।

भगवान् ने फिर बताया है कि "युक्ताहारविहारस्य युक्त-चेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।"

मनुष्य को जीवन में कुछ मूल सिद्धान्त ग्रहण करने चाहिए। खान-पान में, जागने-सोने में और सब कार्यों में संयमी होना चाहिए। ध्यान पेट से आरम्भ होता है। यदि वह बहुत भरा हो और ध्यान किया जाय तो इसके परिणामस्वरूप अनेक रोग होंगे। अतः पेट हलका रहना चाहिए। तुमको ध्यान करने में उचित रीति से, सीधे बैठना सीखना चाहिए जैसे कि पद्मासन, सिद्धासन। तुम हृदय में, भ्रूमध्य में अथवा और किसी स्थान में ध्यान कर सकते हो। सब मन पर निर्भर है। उन महान् आत्माओं का ध्यान करो जो ऊपर उठ चुके हैं। उनका अभिवन्दन करो और उनसे प्रार्थना करो कि वे तुम्हें प्रकाश प्रदान करें। गुरु का होना आवश्यक है। उनसे मन्त्र ग्रहण करो और जितना अधिक-से-अधिक हो सके उसका जप करो। सफलता के लिए गुरु और उच्चकोटि के महात्माओं की सेवा अति-आवश्यक है। जैसे-जैसे तुम प्रगति करो, तुम पुरुषसूक्त का अध्ययन कर सकते हो। वह बहुत उत्तम है। तुम उसके अर्थ को समझो और उस पर ध्यान जमाओ और अन्त में 'ॐ' पर। तम 'ॐ' की सुन्दरता माण्डूकोपनिषद् से जान सकते हो। तुम सदैव अपने मन को जाँच करते रहो कि वह सांसारिक वस्तुओं से पीछे हट रहा है या उनकी ओर बढ़ रहा है। एक परिश्रमी विद्यार्थी की भाँति प्रयत्न करो। जब वह अनुत्तीर्ण होता है तो वह नये सिरे से प्रयत्न करता है। अतः निरन्तर

प्रयत्न करते जाओ। और कोई नहीं—जीवनन्मुक्त होने की प्रबल उत्कण्ठा अपने हृदय में बनाओ। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

महान् आदि शङ्कराचार्य ने बताया है कि जो धन भूगर्भ में छिपा हुआ है उसको वे ही देख पाते हैं जिनके नेत्रों में सिद्धाञ्जन लगा है। जो उसको जान लेते हैं वे पृथ्वी को खोदने के लिए औजार लाते हैं और भूमि को खोद कर उस धन को प्राप्त कर लेते हैं।

उनको फिर कुछ भी करना शेष नहीं रहता। उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया।

ध्यानाञ्जनेन प्रसमीक्ष्य तमः प्रदेशम्।
भित्वा महीं बलिभिरीश्वरनाममन्त्रैः॥
दिव्याश्रयं भुजगभूषण उद्वहन्ति।
ये पादपद्मयुगलं शिव ते कृतार्थाः॥

—जिस प्रकार सिद्धाञ्जन लगा कर लोग पृथ्वी में गड़े हुए धन, रत्न आदि को देख लेते हैं, फिर जमीन खोद कर उस सम्पत्ति को निकाल लेते हैं, इसी प्रकार ध्यान-रूपी सिद्धाञ्जन लगा कर जो अपने मन की अन्धकारमयी गहराइयों का सर्वेक्षण कर लेते हैं, फिर मन की कठोर पृष्ठभूमि को परम शक्तिमय ईश्वरनाम के मन्त्रों से तोड़ कर खोद लेते हैं और आपके दिव्य और परम आश्रयणीय युगल पदारविन्दों को प्रकट करके साक्षात् दर्शन कर लेते हैं। हे सर्पों की माला धारण करने वाले शिवजी! वे लोग कृतार्थ हैं।

हमारे मन की उपमा एक ऐसे गहरे स्थान से दी गयी है जिसके मध्य भाग में (हृदय में) परम श्रेष्ठ धन है—भगवान् के चरणारविन्द हैं। हमको उस गहरे स्थान से उस धन को निकालना है, पर निकालें कैसे ? हमें ध्यान के द्वारा अपनी त्रुटियों को देखना होगा और उनसे ऊपर उठने का प्रयत्न करना होगा, पर इसको करें कैसे ? 'महावलिभिरीश्वर नाम मन्त्रैः'—महाबली भगवन्नाम-मन्त्रों द्वारा अर्थात् भगवन्नाम-जप से। इनमें बहुत बड़ी शक्ति है। अतः अपने मनमन्दिर में प्रवेश करो, भगवान् के चरण-कमलों का पकड़ो और सदा-सदा के लिए धनी और सम्पन्न बनो।

हरि ॐ ! हरि ॐ !! हरि ॐ !!!

●

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का मूल अर्थ है ब्रह्म में रमण करना। इस उद्देश्य की प्राप्ति काम-वासना पर नियन्त्रण किये बिना असम्भव है। इसीलिए ब्रह्मचर्य का दूसरा अर्थ काम-वासना की विजय लगाया जाता है। इसके नियन्त्रण के बिना कोई आध्यात्मिक जीवन में एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता। विवाहित व्यक्ति भी भगवदनुभव प्राप्त कर सकता है। इस जीवन में भी उसको अपने को संयमित रखना है। उसको परस्त्रियों के पास कदापि नहीं जाना चाहिए। वह केवल अपनी ही पत्नी से कुछ निर्धारित दिनों में ही समागम कर सकता है। इसके लिए अनेक प्रतिबन्ध हैं जिनसे आत्म-संयम में उसको बहुत सहायता मिलेगी।

इस सम्बन्ध में ब्रह्मचर्य से सम्बधित एक संस्कृत पद्य का आशय लिख रहा हूँ। ब्रह्मचर्य अपने कर्त्तव्य का उत्तमोत्तम रीति से पालन करने में तुम्हारा सहायक होता है। यह तुमको नाम, कीर्त्ति, दीर्घायु तथा स्वास्थ्य देता है, जीवन को पवित्र बनाता है और परलोक के हेतु अमृत है।

× × ×

ब्रह्मचर्य सब-कुछ है। उसके बिना आध्यात्मिक जीवन में तुम एक डग भी आगे नहीं बढ़ सकते। अतः व्यक्ति को बहुत सावधान रहना चाहिए। बुरे सङ्ग से बचना चाहिए। विवेक-शक्ति को पुष्ट करना चाहिए। अच्छे-बुरे तथा सत्य-असत्य का विवेचन करना चाहिए। कल्याणकारी और सत्यतत्त्व से उत्तरोत्तर प्रेम बढ़ाओ। असत्य धीरे-धीरे स्वयं दूर हो जायगा।

× × ×

वैवाहिक जीवन में भी मनुष्य ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है यदि वह अपनी इन्द्रियों को संयम में रखे और निर्धारित समय पर ही स्त्री का साथ करे।

× × ×

ब्रह्मचर्य-जीवन असिधारा व्रत है। मनुष्य में प्रतिरोध की शक्ति होनी चाहिए। शक्ति ही जीवन है। जप तथा ध्यान तुमको समुचित शक्ति देंगे।

× × ×

अपना जीवन सुखी बनाने के लिए ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान करो। इससे दूसरे सब गुण भी तुम्हें मिल जायेंगे। जब वृद्धावस्था का आक्रमण होगा, बाल सफेद हो जायेंगे और

झुर्रियाँ पड़ जायेंगी तब भी तुम छोटे बच्चों के आनन्द जैसा मानसिक सुख अनुभव करोगे।

× × ×

ब्रह्मचर्य जिस प्रकार एक व्यक्ति का उत्थान करता है; उसी प्रकार वह समाज, देश और राष्ट्र का भी उत्थान करता है। ब्रह्मचर्य ही सब गुणों का आधार है। देश के समाज-सेवी लोग इस पर ध्यान दें।

× × ×

पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करो। तुम अनुभव करोगे कि तुम तीव्र गति से उन्नति कर रहे हो। तब तुम संसार में रहो अथवा एकान्त घोर वन में, इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। यह एक बड़ी साधना है। काम का साहस से सामना करो और विजय प्राप्त करो।

× × ×

स्त्रियों की मण्डली में रहने से मनुष्य पतन की ओर जाता है; अतः व्यक्ति को सावधान रहना चाहिए।

× × ×

तुम युवक हो। तुमको ब्रह्मचर्य पालन करना कठिन प्रतीत होता होगा। पथ-भ्रष्ट मत होना। नारी-रूप में तनिक-सी भी रुचि मत रखना। यदि तुमको ब्रह्मचर्य-जीवन कठिन प्रतीत होता हो तो विवाह कर लेना और संयमित जीवन व्यतीत करना।

× × ×

मुझे लेशमात्र भी वृद्धावस्था का अनुभव नहीं होता। मैं एक बालक की भाँति पूर्ण स्फूर्ति अनुभव करता हूँ। यह ब्रह्मचर्य

के कारण है। यदि कोई पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करे तो वह स्वयं भगवद्रूप बन जाता है। ब्रह्मचर्य की यही महिमा है, परन्तु इसकी परवाह कौन करता है ?

●

प्रार्थना

प्रभु के आगे दीन भाव रखो। 'मैं कुछ भी नहीं हूँ। हे प्रभु ! मैं कुछ भी नहीं हूँ। आप ही मेरे लिए सब-कुछ हैं, हे प्रभु।' इस भावना को सतत ध्यान में रख कर प्रार्थना करते रहो। तुम्हारी प्रार्थना सुनी जायगी। सचमुच प्रार्थना अद्भुत चमत्कार करती है। सचमुच इसमें बहुत बड़ी शक्ति और सामर्थ्य है। प्रार्थना अन्तर हृदय से होनी चाहिए। ऐसी प्रार्थना के साथ मन का पूर्ण ऐक्य होना चाहिए।

× × ×

"मो सम दीन न दीन हित तुम समान रघुवीर।
अस विचारि रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर॥
कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर, प्रिय लागहु मोहि राम॥"

इस प्रकार की भावना होनी आवश्यक है। प्रार्थना में अद्भुत चमत्कार है। जैसे कि जल के बाहर मछली जल के लिए व्याकुल होती है उसी प्रकार सत्यनिष्ठा, लालसा और उत्कण्ठा से निरन्तर प्रभु से प्रार्थना करो।

× × ×

भगवान् बड़ा दयालु और करुणामय है। यदि तुम्हारी प्रार्थना सच्ची और निष्कपट होगी तो वह सुनेगा। केवल अपने हृदय को उसके सामने खोलो। प्रभु का स्मरण करते रहो और उस पर निर्भर रह कर प्रत्येक कार्य को करो। जप भी करो। रोओ—रोओ तब वह तुम्हारी सुनेगा।

× × ×

अपना पूजन, ध्यान तथा जप लगातार करो। भगवान् से प्रार्थना करो कि वे तुमको तुम्हारे समस्त भार से मुक्त कर दें। ऐसी प्रार्थना सत्यनिष्ठा से करो। भगवान् को ऐसी प्रार्थना सुननी पड़ेगी।

× × ×

माया को जीतना बहुत कठिन है। 'मैं समुद्र के पार पहुँच गया हूँ'- ऐसा सोचते ही तुम देखोगे कि तुम समुद्र के बीच में ही हो। तब क्या करोगे? 'त्वमेव शरणम्, त्वमेव शरणम्' से ही पार हो सकोगे।

× × ×

हे भगवन्! मेरा मन सदा, सर्वदा आपके पदारविन्दों में लीन रहे! बड़े बलवान् डाकू मेरे चारों ओर अवसर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं अति-दुर्बल हूँ, कोई और सहायक नहीं है। मुझे आपका ही आसरा है। मेरी तुरन्त ही रक्षा करो, रक्षा करो।

× × ×

हे भगवान्! मैं आपका पूजन कैसे करूँ? मैं आपकी महिमा के विषय में कुछ भी नहीं जानता।

× × ×

हे भगवान्! करुणानिधे! भक्तवत्सल! पर्दे को हटाओ जिससे मैं आपका दर्शन तो कर सकूँ।

× × ×

प्रार्थना में बड़ी शक्ति है। वह प्रार्थना जिसमें मन पिघला हो और अन्तर हृदय की गहराई से निकले, उसका फल प्राप्त होने में देरी नहीं लगती। भगवान् के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

× × ×

भक्ति तथा मुक्ति की व्यर्थ बात करते रहोगे तो सुनेगा कौन? यदि तुम निष्कपट भाव से, द्रवित हृदय से भगवान् से प्रार्थना करो तो दयामूर्त्ति तुम्हारी समस्त इच्छाएँ शीघ्र पूरी करेगा।

× × ×

यदि तुम निश्छल और द्रवित हृदय से भगवान् को पुकारो तो वह अवश्य तुम्हारी सुनेगा। छल से जो भी करोगे, वह निरर्थक होगा। निष्कपट प्रार्थना का फल जल्दी ही मिलेगा।

× × ×

निष्कपट भाव और तत्परता से प्रार्थना करो। वह (प्रभु) तुम्हारी सुनेगा।

× × ×

हे भगवान्! तेरी इच्छा पूर्ण हो।

× × ×

हे भगवान्! आपका नाम शान्ति है। दया करके जैसे भी हो मेरे मन को शान्त कर दीजिए।

× × ×

भगवान् से प्रार्थना करते रहो। तुमको उत्तरोत्तर प्रकाश प्राप्त होगा और सब शङ्काओं का समाधान हो जायगा।

× × ×

शुद्ध भावना सर्वोत्तम प्रार्थना है।

× × ×

मेरी इच्छा तुम्हारे घर को एक मन्दिर बनाने की थी जिसमें घर का प्रत्येक व्यक्ति पवित्र और भगवान्-भीरु हो और उसको जो भी कर्त्तव्य सौंपा जाय उसको अधिकाधिक सावधानी और बुद्धिमानी से करे। यदि मुझको इसमें थोड़ी-सी भी सफलता मिले तो मैं इसको बड़ी सफलता समझूँगा। मैं तुमको कुछ पद्य भेज रहा हूँ :—

(1) *Quiet Lord ! My forward heart,*
Make me gentle, pure and mild,
Upright, simple, free from art,
Make me as a little child,
From distrust and envy free,
Pleased with all that please to Thee.

(2) *What Thou shalt today provide,*
Let me as a child receive.
What tomorrow may be tide,
Calmly to Thy wisdom leave.
'Tis enough that Thou wilt care,
Why should I then burden bear.

(3) *As a child relies on a care beyond its own,*
Neither feeling strong not wise,

Will not take a step alone,
Let me thus with Thee abide,
As my Father, Friend and Guide.

भावानुवाद—

(१)

साक्षात् शान्तरसपूर्ण प्रभो, मम हृदय बनादो प्रगतिशील।
हो जाऊँ मैं सौजन्यपूर्ण, नित शुद्ध, सदा ही विनयशील॥
मैं रहूँ सत्य व्यवहारनिष्ठ, निष्कपट, सरलतापूर्ण सदा।
शिशु के सम भोला जीवन हो, ऋजुतामण्डित-युत प्रेम सदा॥
सन्देह न हो, विश्वास रहे, कुछ डाह न हो, सन्तोष रहे।
जिसमें प्रभु तेरी मरज़ी हो, मेरे मन का भी तोष रहे॥

(२)

जो आज प्यार से तू दे दे, तेरा बच्चा है, ले लूँगा।
कल के तूफानों से रक्षा, तेरे विवेक पर छोड़ूँगा॥
तू प्रेमपूर्ण संरक्षक है, इतना ही मुझको काफी है।
सब चिन्ताओं, कुण्ठाओं के, कुल भार से मेरी माफी है॥

(३)

जैसे शिशु पितु के आश्रित है लालन-पालन पर स्नेह भरे।
अपना विवेक सामर्थ नहीं, पग एक नहीं वह स्वयं धरे॥
तेरे आश्रित जीवन मेरा, वैसे ही बीते इस जग में।
तू पिता सदृश, तू मित्र सदृश, तू ही पथदर्शक हो मग में॥

●

स्वस्थ जीवन और मृत्यु

स्वस्थ शरीर सांसारिक कार्यों तथा आध्यात्मिक साधना दोनों ही के लिए आवश्यक है।

× × ×

अपने शरीर पर विशेष ध्यान दो; क्योंकि यह माया के महासागर से पार होने के लिए नाव है। ध्यान का आश्रय लो। कम से-कम तुमको शारीरिक तथा मानसिक शक्ति अवश्य प्राप्त होनी चाहिए।

× × ×

अपने शरीर को, विशेष रूप से उसके रोग को, भूलने का प्रयत्न करो। जब भी उसका विचार आये तो केवल भगवान् का स्मरण करो।

× × ×

शक्ति जीवन है और निर्बलता मृत्यु।

× × ×

यदि मनुष्य अपने भोजन में संयम रखे तो वह स्वस्थ रह सकता है।

× × ×

जप और पूजा करते जाओ—वह तुमको अपने-आप ठीक कर देगी। भगवान् का स्मरण करो – तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक हो जायगा।

× × ×

रोगी के शरीर को स्पर्श करके कवच का पाठ करो। ऐसा दिन में तीन बार करो। रोगी ठीक हो जायगा। प्रार्थना में विलक्षण शक्ति है। कवच सर्वोत्तम औषधि है।

× × ×

शङ्खध्वनि से बहरापन दूर हो जाता है। शङ्खध्वनि अन्य रोगों की भी औषधि है।

× × ×

भागवती-स्थिति के बाद दूसरा स्थान स्वच्छता का है।

× × ×

शान्त, निर्विक्षेप, प्रसन्न जीवन स्वास्थ्य का रहस्य है।

× × ×

तुम जो इच्छा हो खाओ; परन्तु भगवान् को भूलो मत। यदि कोई निकम्मा (तामसी या राजसी) भोजन करे तो वह भगवच्चिन्तन के योग्य नहीं रह सकेगा। इसी कारण से सात्त्विक भोजन की आवश्यकता है।

× × ×

सदा स्वच्छ रहो। प्रातःकाल स्नान करने से बुद्धि का विकास होता है। बाह्य शुद्धि से अन्तर शुद्धि होती है। इसलिए निर्मल जल में स्नान करो। ईश्वर का चिन्तन करो।

× × ×

क्या तुमको मृत्यु से भय लगता है? हमें मृत्यु का साहस से सामना करना चाहिए। वही जीवन वास्तविक जीवन है जिसमें हरएक कार्य ठीक और शुद्ध प्रकार से किया जाय, सिवाय भगवान् के अन्य किसी से आसक्ति न रखी जाय। और मृत्यु होती किसकी है? जीव तो मरता नहीं केवल शरीर ही मरता है।

× × ×

प्रभु में आस्था रखो। जितनी बलवती तुम्हारी आस्था होगी उतना ही मृत्यु-भय कम होता जायगा। मानसिक रूप से शक्तिशाली बनो। मानसिक स्वास्थ्य से शारीरिक स्वास्थ्य भी बनेगा। शक्ति- सम्पन्न रहो। भय मत करो।

× × ×

जो काम आज करना है उसे आज ही करो, कल के लिए मत छोड़ो। मृत्यु कब आयेगी, यह कोई नहीं जानता। मृत्यु का स्वागत करने के लिए सदा तैयार रहो। यही सुखी जीवन है।

× × ×

यह समझ कर कि हम सब काल के मुख में हैं, समय को जरा भी मत खोओ। अपने कर्त्तव्य को शीघ्र समाप्त करने का प्रयत्न करो।

× × ×

सभी मृत्यु को सब जगह देखते हैं। हमको भी मरना है, इसका कभी विश्वास नहीं करते। मृत्यु-भय हमें पाप कर्मों से छुड़ा कर सत्कर्म करने में सहायक होता है।

× × ×

सबको एक-न-एक दिन मरना है, इसका कोई विचार ही नहीं करता।

× × ×

जनसङ्ख्या बहुत बढ़ गयी है। कोई विनाशकारी सङ्कट अवश्यम्भावी है। हमको सदा यहाँ नहीं रहना है। किसी भी क्षण जाना पड़ सकता है। इसलिए हर समय उसके लिए तैयार रहना चाहिए। आसक्ति नरक है और अनासक्ति महान् स्वर्ग; इसलिए आसक्त मत होओ। हरएक को यह स्मरण रखना

है कि उसको इस या दूसरे क्षण जाना है और उसके लिए तैयार रहना है। प्रभु के चरणों की शरण लो। उस श्रेष्ठ प्रभु को भूलो मत। जप, प्रार्थना, हवन इत्यादि करो। सदा उसका चिन्तन करते रहो। मैं सदा जाने के लिए तैयार हूँ।

× × ×

यह सबसे बड़ा आश्चर्य है। एक वस्तु सदैव हमारे साथ रहती है। जहाँ कहीं भी हम जाते हैं वह निश्चय ही हमारा पीछा करती है। क्या तुम जानते हो कि वह है क्या? इसको मृत्यु कहते हैं। हमको यहाँ से कब जाना है, इसको कौन जानता है? परन्तु हमारे प्रत्येक कार्य से लोगों को यही विश्वास होगा कि हम जीवित रहेंगे और दीर्घकाल तक। इससे तुम एक दम पकड़े जाते हो और बारम्बार जन्म लेना पड़ता है। इस पर अवश्य विचार करो। तुम सब बड़े बुद्धिमान् हो। परन्तु क्या तुम जानते हो कि तुम काल के गाल में पहुँच गये हो।

तुम मृत्यु को कैसे जीत सकते हो? यह बहुत सरल है। बारम्बार विचार करो कि तुम क्या हो? तुम वह तत्त्व हो जिसे अग्नि जला नहीं सकती, जल डुबा नहीं सकता तथा पवन उड़ा नहीं सकता। यह 'मैं' ही वास्तविक तुम हो—पूर्ण मुक्त, पूर्ण आनन्द, एकमेवाद्वितीयम् हो। हर स्थान पर यह 'मैं' ही है जो सत्-चित्-आनन्द है। इसको अनुभव करने का प्रयास करो।

× × ×

कर्म

हम सब भगवान् के हाथों के यन्त्र हैं। हमको कर्म सच्चाई और ईमानदारी से करना है। 'भगवान् तेरी इच्छा पूर्ण हो', हमारा यही भाव रहना चाहिए। इससे हम सदा सुखी रहेंगे —शोक और शिकायत के लिए कोई स्थान ही न होगा।

× × ×

कर्म पूर्ण श्रद्धा और दृढ़ता से करो। तब वह ठीक हो जायगा। उस सर्वशक्तिमान् भगवान् का स्मरण करके कार्य आरम्भ करो।

× × ×

जो भी काम आरम्भ करो उसको अपने पूरे सन्तोषानुसार करो। जो भी काम हमारे सामने आये उसका तिरस्कार नहीं, वरन् स्वागत करना चाहिए। कर्म तुमको अधिकाधिक शक्ति, अधिकाधिक दृढ़ता और अधिकाधिक एकाग्रता भी प्रदान करेगा। आध्यात्मिक जीवन अज्ञानी या बलहीनों के लिए नहीं है, वह वीर और पराक्रमी के लिए ही है। इसमें बाधाएँ भरी पड़ी हैं। बलहीन व्यक्ति एक छोटी-सी भी बाधा आते ही भाग खड़ा होगा।

× × ×

कर्म में संलग्न रहो।

× × ×

व्यक्ति को पहले यह निश्चय करना चाहिए कि वह चाहता क्या है? इसको स्पष्ट रीति से जान कर ही वह उसके लिए साधना कर सकता है।

× × ×

मनुष्य बात तो बड़ी लम्बी-चौड़ी कर सकता है, परन्तु आचरण करना बहुत कठिन है।

× × ×

लौकिक वृत्ति वालों से युक्ति बिना व्यवहार करना बहुत कठिन है या यों कहें कि असम्भव है। प्रेम और धैर्य भी आवश्यक हैं।

× × ×

अपने को सदा कर्म में जुटाए रहो। अपने उत्थान के लिए कर्म करना अनिवार्य है। उत्साहपूर्ण कर्म के बिना जीवन व्यर्थ हो जायगा। अतः कर्म में निरन्तर रत रहो; परन्तु उस प्रभु को भूलो मत जो तुम्हारे जीवन का सार है। कर्म करते हुए भी तुम प्रभु का स्मरण कर सकते हो। यह प्रभु ही है जो तुम से कर्म कराता है। उसके बिना तुम्हारा कोई अस्तित्व है ही नहीं।

× × ×

यदि तुम प्रत्येक वस्तु को स्वप्न ही समझो—और वास्तव में है भी ऐसा ही—फिर भी संसार में इस तरह रहो जैसे वह बिलकुल सत्य हो। अपने प्रत्येक कार्य को पूर्ण सन्तोष से करो। अभिमान और अहं-भाव मत रखो।

× × ×

किसी कार्य को करने से पहले उसे अच्छी तरह से सोचो। जब उसे आरम्भ कर दो तो पूरा करने के लिए यथाशक्ति परिश्रम करो; अधूरा मत छोड़ो।

× × ×

कर्म श्रेष्ठ और वरदान-स्वरूप है। कर्म के बिना कोई बलिष्ठ, योग्य, निष्पाप और सच्चा धार्मिक नहीं हो सकता।

× × ×

हमारे साहसी कर्म भी यदि किसी के प्रतिकूल हों तो उसे न करना ही उचित है। कर्म वही करना चाहिए जिसकी सब सराहना करें।

× × ×

जो भी पुस्तकें तुम्हें रुचिकर हों उनको पढ़ो। परन्तु सावधान! सदा निर्मल बने रहना। शुद्धता, शान्ति और ईश्वरानुग्रह से तुम नरक को स्वर्ग और इनके अभाव में स्वर्ग को नरक बना सकते हो। यदि ठीक से किये जायें तो सभी कार्य श्रेष्ठ हैं। उनके करने में शिकायत करना या बड़बड़ाना नहीं चाहिए। जो काम तुम्हें प्राप्त हो उसको अच्छे से अच्छा करो। तुमको अपने दोषों का स्वयं पता लगाना है और एक-एक करके उनको दूर करने का प्रयास करना है।

× × ×

किसी भी शुभ कार्य के करने में विघ्न आते ही हैं। इन विघ्नों को निडरता से ठुकरा कर आगे बढ़ो। इससे तुमको पर्याप्त शक्ति मिलेगी और जो कार्य आरम्भ किया है वह पूरा भी हो जायगा।

× × ×

स्त्रियों की धर्मभीरुता के बिना पति लोग सदा सबसे घुलमिल जाते और घर की शुद्धता तथा पवित्रता मिट गयी होती।

कर्त्तव्य

अपना कर्त्तव्य करते चलो। हमको उसके फल का कोई अधिकार नहीं है। परन्तु कर्त्तव्य समय से, बड़ी तत्परता और निष्ठा से अवश्य करना चाहिए। ऐसा कर्त्तव्य बिरले ही फल दिये बिना रहता है।

× × ×

मनुष्य को अपने कर्त्तव्य की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। अंग्रेजी की एक कहावत है कि *'Charity begins at home'* —उदारता का आरम्भ अपनों से ही होता है। सबके साथ सहानुभूति रखो। यह भावना तुमसे यथाशक्ति दूसरों की सेवा करायेगी।

× × ×

कर्म करने का अभिप्राय है कि हम कर्म से मुक्त होने के योग्य बनें। अतः नाना प्रकार के कर्त्तव्यों को बड़ी सावधानी से और पूरे मन से करो।

× × ×

अपना कर्त्तव्य खूब सुचारु रूप से करते जाओ और भगवान् के चरण-कमलों में अपनी भक्ति तीव्र करने का प्रयास करो।

× × ×

अपना कर्त्तव्य जितना अच्छी तरह से कर सको करो। कर्त्तव्य का ठीक से पालन करना सबसे ऊँची पूजा है। इसको समझो।

× × ×

सत्य और कर्त्तव्य क्या हैं इनको समझो।

× × ×

सर्वोत्तम रीति से काम करते रहो। भगवान् का अनुग्रह तुम्हें सदा, सर्वदा प्राप्त होता रहेगा और सब ठीक होता चला जायगा।

× × ×

हम केवल एकमात्र धरोहर रखने वाले हैं। हमारा कर्त्तव्य यह है कि जो-कुछ भी हमको सौंपा गया है उसकी सुचारु रूप से देखभाल करें। तब हम सुरक्षित रहेंगे और मुक्त हो जायेंगे। सुख और दुःख समान रहेंगे। हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम अपने को ऐसा प्रशिक्षित करें कि हमको ऐसी मानसिक स्थिति प्राप्त हो।

× × ×

दूसरों को सुधारना एक कठिन काम है; परन्तु अपने को सुधारना बड़ा सुगम है। अतः अपने कत्तव्य बहुत अच्छी तरह से करो। सब-कुछ प्रभु पर छोड़ कर शान्त और प्रसन्नचित्त रहो। यदि तुम सारा उत्तरदायित्व अपने सिर पर लेना चाहते हो तो तुम कहीं के भी नहीं रहोगे। बुद्धिमान्, दूरदर्शी और सावधान रहो।

× × ×

माता घर का जीवन और प्रकाश है। तुम्हारे विविध प्रकार के कर्त्तव्य हैं और तत्सम्बन्धी दायित्व भी। उनको शान्ति और प्रसन्नता से करो।

× × ×

भगवान् के प्रति अपने प्रेम को पूजा, जप, स्तोत्र तथा कीर्त्तन द्वारा बढ़ाने का प्रयास करो। जो कर्त्तव्य तुमको प्राप्त

हैं उनको सुचारु रूप से प्रसन्नतापूर्वक पूरा करो, जैसे तुम्हारे माता, पिता, पति, पत्नी, सन्तान, सेवक, अतिथि, दीन तथा क्षुधापीड़ित जनों के प्रति कर्त्तव्य।

× × ×

अपने कर्त्तव्यों का अच्छी -से-अच्छी तरह पालन करने के फलस्वरूप मानसिक सन्तुलन प्राप्त किये बिना सच्चा वैराग्य होना बहुत कठिन है। ठीक से किया हुआ कर्त्तव्य पूजा है। अतः केवल अपना कर्त्तव्य करो। माया के विषय में बाद में विचार करेंगे। अभी तो तुमको संसार को वास्तविक-सत्य मान कर कर्त्तव्य करना है। तुमको यह समझना है कि कारण के बिना कार्य नहीं होता। संसार कार्य है और भगवान् कारण है। तुम केवल अपना कर्त्तव्य करो और कम-से-कम बीच-बीच में भगवान् को स्मरण करते रहो। गायत्री-मन्त्र का अवलम्बन लिए रहो। वह ही तुमको लक्ष्य तक पहुँचा देगा।

× × ×

माता-पिता का कर्त्तव्य केवल सन्तानोत्पत्ति ही नहीं है बल्कि यह देखना है कि सन्तान सुचारु रूप से प्रगति करे।

कठिनाइयाँ

मनुष्य को बलहीन नहीं होना चाहिए। बलहीन के लिए इस लोक में या परलोक में कहीं भी स्थान नहीं है। इसलिए मनुष्य को बलवान् होना चाहिए और कठिनाइयों का दृढ़ता से सामना करना चाहिए। आलसी और निरुद्योगी जीवन मत बिताओ।

× × ×

रामायण तुमको सही और बहुमूल्य उपदेश देती है। उसका अध्ययन करो। भगवान् न करे परन्तु यदि तुम पर घोर सङ्कट भी आ पड़े तो भी तुम अपना मानसिक सन्तुलन बनाये रख सको तो यह महान् तप होगा। हमको संसार से बहुत-सी शिक्षाएँ ग्रहण करनी हैं। शक्तिशाली राज्यों का भी पतन होता है। विपत्तियाँ भी छद्मवेश में आती हैं। प्रभु पर आस्था रख कर हमको साहस और वीरता से उनका सामना करना होगा। प्रभु परम कल्याण ही करेगा। निर्भीक और प्रसन्नचित्त बनो।

× × ×

विपत्तियाँ छद्मवेश में वरदान हैं। व्यक्ति को उनसे लाभ उठाना चाहिए अन्यथा वे विपत्तियाँ ही रह जाती हैं।

× × ×

आखिर यह है क्या—जीवन और सङ्कट! केवल एक स्वप्न मात्र ही तो है। अपने विश्वास में दृढ़ रहो। प्रभु का स्मरण करो, बलवान् और बन्धनमुक्त बनो।

× × ×

कार्य बिना कारण के नहीं हो सकता। तुम्हारी विपत्तियों के पीछे भी कोई गम्भीर कारण अवश्य होगा जो कोई जानता नहीं। अतः हमको दोष नहीं देना चाहिए। जो भी विपत्ति आये उसे आन्तरिक प्रसन्नता और शान्ति से सहन करना चाहिए। यह कौन जानता है कि ये वास्तव में आपत्ति हैं या छद्मवेश में भाग्योदय है। अतः जो भी हो उसे सहन करो और अपने कर्त्तव्य का पालन करते जाओ।

× × ×

मनुष्य जो बोता है वही काटता है। प्रत्येक परिणाम के पीछे उसका कारण होता है। यह तथ्य हमारे वर्त्तमान जीवन पर

भी लागू है। यदि हमको दुःख भोगना पड़ता है तो हमको समझ लेना चाहिए कि यह हमारे वर्त्तमान अथवा पूर्व-कर्मों के कारण ही है। अपनी त्रुटियों के लिए हमको केवल अपने को ही दोषी ठहराना चाहिए, भगवान् या किसी अन्य को नहीं। यदि हम इनको स्वीकार करें और प्रभु से निष्कपट भाव से प्रार्थना करें और प्रभु में मन लगा कर अपने भाग्य को सुधारने के लिए प्रयास करें तो वह हमारे लिए सब-कुछ करेगा। यही एकमात्र उपाय है और ऊँची श्रेणी की तपस्या भी।

× × ×

तुमको एक के बाद एक सङ्कट सहन करना पड़ रहा है। यदि तुम इन सङ्कटों को तपस्या का सच्चा अवसर समझ कर प्रभु के चरणों में लौ लगा लो तो तुम बहुत शक्तिशाली और निश्चिन्त हो सकते हो।

× × ×

जीवन-निर्वाह बड़ा कठिन है। मनुष्य को इसमें बहुत से हेर-फेर का सामना करना पड़ता है। तुमको उसके लिए तयार रहना होगा। यह कोई आसान काम नहीं है।

× × ×

ये सब तुम्हारी परीक्षाएँ हैं। शक्ति ही जीवन है। जो इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने की पर्याप्त शक्ति रखते हैं वे ही सदैव के लिए स्वर्ग का राज्य पा सकेंगे जो कि दूर नहीं वरन् भीतर विद्यमान है।

× × ×

हर प्रकार के कष्टों, सङ्कटों को सहना सीखो। यह तुम्हारे जीवन के लिए हितकर होगा।

श्रीमद्भागवत पर आधारित उपदेश

श्रीमद्भागवत में नवयोगियों के प्रश्नोत्तर का वर्णन है। इन नवयोगियों के नाम हैं :

(१) कवि, (२) हरि, (३) अन्तरिक्ष, (४) प्रबुद्ध, (५) पिपलायन, (६) अविर्होत्र (७) द्रुमल, (८) चमस तथा (९) करभाजन।

द्वितीय नवयोगी श्री हरियोगी जी ने बताया कि भक्त तीन प्रकार के होते हैं—उत्तम, मध्यम और प्राकृत।

उत्तम भक्त सर्वभूतों में भगवान् को ही देखते हैं। ऐसा करने के लिए अपने को समझना आवश्यक है। मेरे अन्दर भगवान् हैं, यह निश्चय करना पड़ेगा। मैं शरीर से अलग हूँ, यह तय करना पड़ेगा। भगवान् सब वस्तुओं के अधिष्ठान हैं। जैसे एक बूँद समुद्र के जल को चखने से यह ज्ञात हो जायगा कि समुद्र का जल खारा होता है उसी प्रकार अगर यह ज्ञात हो जाय कि मुझमें भगवान् ही आत्मारूप में स्थित हैं तो यह सिद्ध हो जायगा कि सबमें भगवान् ही हैं।

मध्यम भक्त ईश्वर से बहुत प्रेम रखते हैं। पूजा इत्यादि करते हैं। प्रभु के भक्तों से मित्र-भाव रखते हैं। अज्ञानी पुरुषों पर कृपा करते हैं। शत्रुओं के प्रति कोई शत्रु-भाव नहीं रखते वरन् उदासीन रहते हैं।

प्राकृत भक्त प्रभु की पूजा में द्रव्यादि लगाते हैं। प्रभु में विश्वास भी करते हैं; परन्तु दीन, दुःखियों तथा भगवद्भक्तों की सहायता करने में बड़े ही कृपण होते हैं।

उत्तम भक्तों में सन्तोष होता है। बुराई, भलाई, राग, द्वेष-रहित होते हैं। देह-धर्म, भय इत्यादि से कोई कष्ट नहीं होता और इन पर संयम रखते हैं। खाने में, पीने में, इन्द्रिय-धर्म में फँसते नहीं। सदा भगवान् में ही मन लगाते हैं। प्रत्येक काम निष्काम-भाव से करते हैं। मन शान्त रखते हैं। भगवान् के पादारविन्द से पलक मारने भर के समय के लिए भी दूर नहीं होते। तीनों लोकों को भी भगवान् की भक्ति के बदले में स्वीकार नहीं करते। भगवान् सदा उनके हृदय में रहता है अर्थात् उन्होंने उन्हें प्रेम से बाँध रखा है।

प्रश्न—माया क्या है ?

अन्तरिक्ष योगी जी का उत्तर—'भगवान् सत्-चित्-आनन्द, निराकार, आदि-अन्तरहित है। नाना प्रकार के रूप जो सृष्टि में दीखते हैं ये ही माया है। 'एकोऽहं बहुस्याम्' ऐसा विचार प्रभु के मन में उठा। इस कारण इस सृष्टि की रचना हुई। जीव संसार में खेल कर अन्त में पुनः भगवान् में लय हो जाय, इस उद्देश्य से यह रचना हुई। इस सृष्टि को जड़ से चैतन्य करने के लिए भगवान् ने इसमें प्रवेश किया। प्रत्येक प्राणी को अलग-अलग बुद्धि मिली जिसके कारण जीव को भ्रम होने लगा और वह अपने को अलग-अलग समझने लगा; स्त्री अपने को स्त्री समझने लगी, पशु अपने को पशु समझने लगा इत्यादि। साथ ही अच्छी और बुरी वासनाएं पैदा हो गयीं। इन वासनाओं के वशीभूत होकर प्राणी आवागमन के चक्र में पड़ गया और कर्मानुसार दुःख-सुख पाने लगा।

ब्रह्म से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी बने।

लय क्रम में इन्द्रियाँ मन में, मन बुद्धि में, बुद्धि अहङ्कार में और अहङ्कार ब्रह्म में लीन होता है। अर्थात् इन्द्रियों को निग्रह करके मन में पहुँचते हैं, मन को निग्रह करके बुद्धि में, बुद्धि निग्रह से अहङ्कार में और अहङ्कार को ब्रह्म में ले जाते हैं।'

प्रश्न—माया से कैसे पार जायें ? मन स्थिर नहीं, स्थूल विषयों में बुद्धि है, फिर पार कैसे हों ?

प्रबुद्ध मुनि जी का उत्तर—'जो कर्म करो उसे आँख खोल-कर करो। रात-दिन द्रव्य उपार्जन करते हो; परन्तु शान्ति कभी नहीं मिलती और जीवन व्यर्थ हो जाता है। घर, सन्तान, पशु इत्यादि सब संग्रह किया; परन्तु फिर भी दुःखी ही रहे। ये सब चल और नश्वर हैं। अतएव सुख कैसे मिले इसका विचार करना चाहिए। दुःख से छूटने का कोई रास्ता है या नहीं, इसको जानने के लिए सद्गुरु के पास जाओ। उनकी सेवा करो। निष्कपट सेवा करो। एकमात्र उनकी सेवा का ही ध्यान रखो। अपने उद्धार का विचार बिलकुल छोड़ दो। केवल गुरु की सेवा पर ध्यान रखो। गुरु-सेवा से विषयों से मन हट जायेगा और साधु लोगों से प्रेम, दया, मैत्री, विनय सब मिल जायेंगे। बाह्य शुचि, आन्तरिक शुद्धि, मौन, स्तोत्र-पाठ, जप, स्वाध्याय, सरलता (मन, कर्म, वचन एक से हों), ब्रह्मचर्य, मानापमान में समभाव रखना चाहिए और भगवान् की कथा-श्रवण और कीर्त्तन करना चाहिए। जो-कुछ करो वह सब प्रभु के अर्पण करो। ध्यान रखो कि ये सब प्रभु के अनुग्रह से ही हो रहा है। प्रभु का रूप समझ कर सबकी सेवा करो। आपस में

मिलने पर प्रभु की चर्चा, कथा इत्यादि करो। इस प्रकार माया से मुक्त हो सकते हो।'

प्रश्न—भगवान् को नारायण, ब्रह्म, आत्मा, परमात्मा इत्यादि अनेक नामों से सम्बोधित करते हैं तो उनका स्वरूप क्या है ?

पिप्पलायन मुनि का उत्तर—'सृष्टि, स्थिति तथा संहार के कारण भगवान् हैं, परन्तु भगवान् का कोई कारण नहीं है। यह जगत् भगवान् ने उत्पन्न किया। वे ही इसका पालन और संहार करते हैं; परन्तु वे स्वयं अजन्मा और अनन्त हैं। सत्-असत् में भी वही हैं। जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति में भी वही हैं। नारायण आत्मा हैं। आत्मा पृथ्वी में व्यापक है फिर भी पृथ्वी उसको जानती नहीं। वे पृथ्वी को नियमित रूप से चलाते हैं। वे अमर हैं। वे चेतना देते हैं। इसको तुम पहचानो तो तुमने प्रभु के स्वरूप को पहचान लिया। ज्ञान भी भगवान् का ही रूप है। इसमें परिवर्त्तन नहीं होता।'

'सृष्टि चार प्रकार की है—(१) अण्डज (अण्डे से उत्पन्न होने वाली), (२) उद्भिज (पृथ्वी से उत्पन्न होने वाली, (३) जरायुज (उदर से उत्पन्न होने वाली), और (४) स्वेदन (पसीने से उत्पन्न होने वाली)।

इस तरह यद्यपि सृष्टि पृथक्-पृथक् है फिर भी भगवान् की चेतना (आत्मा) सबमें एक ही है। सब-कुछ करने वाला प्रभु ही है। मिथ्या अहं-भाव को मिटाने पर इसका अनुभव

हो जाता है। स्वप्न में देह तो काम नहीं करती फिर भी व्यक्ति स्वप्न देखता है। वैसे ही 'मैं बहुत अच्छी नींद सोया' यह भी अनुभव करने वाला हमारे शरीर से अलग कोई है जो सब 'देखना', 'करना' अनुभव करता है।

निर्गुण भगवान् की भक्ति करने में कठिनाई होती है; अतएव साकार भगवान् की उपासना करने से सफलता जल्दी मिलती है। प्रभु को प्रेम से पुकारो, रोओ। प्रत्येक आँसू से पाप धुल जाते हैं और आत्मा पर से बादल हट कर आत्मा का दर्शन हो जाता है।'

प्रश्न—निष्काम कर्मयोग बताइए ?

उत्तर - अविर्होत्र मुनि जी ने कहा कि कर्म तीन प्रकार के होते हैं—कर्म, अकर्म और विकर्म।

ईश्वर वेद-रूप है। फिर भी विद्वान् लोग भी भ्रम में पड़ जाते हैं कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। वेद परोक्षवाद है। जो वेद के अनुसार कर्म नहीं करेगा वह नीच गति में पड़ कर आवागमन के चक्र में पड़ जायगा। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य, श्रद्धा, यज्ञ, व्रत से कृत कर्म परमात्मा को अपण करता है वह नैष्कर्म सिद्धि प्राप्त करता है।

अज्ञान को दूर करने के लिए साकार पूजन करना चाहिए। गुरु की दीक्षा लेकर विधिवत् पूजा करो। पहले शुचि (शुद्धता) से भगवान् के सम्मुख बैठ कर प्राणायाम करके न्यास से शरीर को शुद्ध करके पूजा करो। पूजा हृदय में भी हो सकती है। भगवान् के सम्मुख बैठो तो निश्चय बुद्धि से यह विचार करके बैठो कि साक्षात् प्रभु ही प्रतिमा में हैं। पूजा के अन्त में स्तोत्र

पढ़ो। पूजन में अपने शरीर का ध्यान छोड़ कर प्रभु में तन्मयता होनी चाहिए। अग्नि, जल, सूर्य, अतिथि और हृदय में भी पूजा की जा सकती है। सब पूजन अपनी आत्मा का ही होता है। इस प्रकार पूजन करने से शीघ्र ही दुःख से छुटकारा मिल जायगा। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

प्रश्न—भगवान् की पूजा-विधि क्या है ?

चमस मुनि जी ने बताया कि ईर्ष्या, द्वेष आदि को दूर करके, गृह की चिन्ता छोड़ कर ध्यान करना चाहिए। यदि इनको दूर न कर सकोगे तो ध्यान करना व्यर्थ है। जैसे कि जल के ऊपर काई जमी हो तो काई हटाये बिना स्नान करने से सिर तथा दूसरे अङ्गों में लग जायगी। इससे शरीर की दशा और बिगड़ जायगी। इसलिए स्नान करने के लिए काई को हटाना आवश्यक है।

भगवान् कृष्ण ने उद्धव को समझाया कि मोह छोड़ कर मेरे में मन लगाओ। मेरे प्रस्थान करने के पश्चात् तुम भी चले जाना। माया का विचार जब मन में आये तब उसे तुरन्त बाहर निकालो। तुम बहुत-सी वस्तु सुनोगे, देखोगे, सोचोगे। परन्तु यह सब माया है। इसको छोड़ना ही पड़ेगा। गुण और दोष, अच्छा और बुरा, राग और द्वेष इत्यादि का भेद मन के विचलित होने के कारण ही उत्पन्न होता है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न वस्तुओं में भी मन जाता है। यदि इसको प्रभु में स्थिर कर दिया जाय तो ये सबके सब दोष मिट जाते हैं। अतएव इस माया को नश्वर जानकर कछुए की तरह अपने मन और

इन्द्रियों को अपने अन्दर कर लो। ऐसा करने से जगत् के अधिष्ठान आत्मा का आनन्द प्राप्त करोगे। उसे ही 'मैं' समझो। प्रभु में ध्यान लगाने पर जो भी विघ्न आयें उनकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। ऐसे समय पर ज्ञान, विज्ञान और अनुभव को बढ़ाना चाहिए। ऐसा विचार करो जो मुझमें है वह सबमें है। इससे भेद-बुद्धि मिट जायगी।

प्रश्न—ऐसा ज्ञान मिल जाने पर भी मनुष्य अच्छा और बुरा काम क्यों करते हैं ?

उत्तर—भगवान् ने बतलाया कि पूर्व-जन्म के संस्कारों से ऐसा होता है; परन्तु इसका उन पर कोई असर नहीं होता, जैसे एक शिशु सर्प, अग्नि आदि से भय नहीं खाता। वे तो सबमें ब्रह्म को ही अनुभव करते हैं और इससे उनका पतन नहीं होता।

प्रश्न—उद्धव ने कहा—हे भगवान् आपने मेरे उद्धार के लिए बताया कि माया को छोड़ कर जाओ। परन्तु आपका प्रभाव वैभव बहुत बड़ा है। मैं विषयों में फँसा आपको कैसे प्राप्त कर सकता हूँ ? मुझको त्याग-बुद्धि मिलना बहुत कठिन है। कृपा करके मुझे कोई सुगम उपाय बताइए। स्वहश, साक्षी, चैतन्य ही सत्य है। बहिर बुद्धि वाला मूढ़ होता है। उसे अन्तर बुद्धि नहीं होती। अतएव मैं आपकी शरण में आया हूँ।

उत्तर—भगवान् बोले कि मनुष्य अपना गुरु भी है और शत्रु भी। दोनों अपनी आत्मा ही हैं। इसलिए बुद्धिमान् लोग सद्बुद्धि से दुर्बुद्धि को हटा कर आत्मा की रक्षा करते हैं।

मनुष्य अपना गुरु भी है। इसलिए देख कर अनुमान करो कि देखने में जो आता है वह नश्वर है और काम करो। इस विचार को बनाये रख कर अपना कार्य करो। धैर्य वाले को ही आत्म-ज्ञान हो सकता है। बलहीन मनुष्य इसे नहीं प्राप्त कर सकता है। दूर से धूम देखने पर यह अनुमान किया जा सकता है कि वहाँ भोजन बन रहा होगा। इस आशा से भूखा मनुष्य उस स्थान को खोज कर क्षुधा निवृत्ति के लिए वहाँ जाता है। इसी प्रकार तुम अनुभव से यह भी जान सकोगे कि देखने वाला दृश्य से अलग है। इसी प्रकार 'मैं' मन, बुद्धि, शरीर इत्यादि को देखता है। इसलिए 'मैं' इन सबसे अलग है। अतः उस 'मैं' को खोजो। इस खोज में साकार पूजन बहुत सहायक होगा।

यदु और अवधूत का संवाद कह कर भगवान् ने ऊपर लिखे उपदेश को कथा-रूप में सुनाया।

प्रश्न – यदु ने अवधूत से प्रश्न किया कि हे ब्राह्मण ! आपकी बुद्धि बड़ी निर्मल है। यह आपको कहाँ से प्राप्त हुई ? आप बड़े चिन्ता-रहित हैं। आपका स्वभाव बड़ा बलवान् है। हम देखते हैं कि लोगों को मोक्ष की इच्छा तो बहुत ही कम है। सब लोग विषयों में फंसे रहते हैं। आप जड़, उन्मत्त, पिशाच प्रतीत होते हैं; परन्तु आप विद्वान्, गुणवान्, धीर तथा अन्य गुण-सम्पन्न हैं। इसका क्या कारण है ? काम, क्रोध तथा लोभ ये सब अरण्य-अग्नि हैं। इनके कारण सबको दुःख है; परन्तु आपको बिलकुल भी ताप नहीं है। आनन्द ही आनन्द है। मैं जानता हूँ आप ब्रह्मज्ञानी हैं। मैं भी आनन्द खोजता हूँ। मुझे भी उसकी प्राप्ति का मार्ग बताइए।

उत्तर—श्री अवधूत(दत्तात्रेय जी) ने उत्तर दिया कि मैंने अनेक गुरु किये। मैंने जिनमें जो गुण देखा उसे उनसे ग्रहण किया। इस प्रकार मैंने उन्हें गुरु बनाया। इन गुरुओं के नाम हैं—पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर, अजगर, समुद्र, पतङ्गा, भौंरा, हाथी, मधुहा (शहद निकालने वाला), मृग, मछली, पिङ्गला वेश्या, चील, बालक, कुमारी, बाण बनाने वाला, सर्प, मकड़ी और कीटक।

(१) पहला गुरु मैंने पृथ्वी को बनाया। इस गुरु से मैंने यह सीखा कि लोग इस पर चलते हैं, काटते-पीटते सब-कुछ करते हैं। ऐसा होते हुए भी पृथ्वी शान्त ही रहती है। अतः कितने विघ्न आयें हमको धैर्य और क्षमा रखने चाहिए अर्थात् पृथ्वी से मैंने धैर्य और क्षमा सीखे।

पृथ्वी में पेड़, पहाड़ तथा रत्न भी होते हैं जो कि दूसरों के काम में आते हैं। इनसे मैंने 'परमार्थ' सीखा। आम का वृक्ष फल लगने पर कितना झुक जाता है अर्थात् नम्र हो जाता है। अपने फल अपने-आप न खाकर दूसरों के उपयोग हेतु ही देता है।

(२) दूसरा गुरु वायु है। वायु प्राण है। इसका काम प्राण की रक्षा करना है। इतना ही भोजन लो जिससे प्राण की आवश्यकता पूरी हो जाय। रसना की तृप्ति के हेतु भोजन न हो, न निर्बलता ही हो। वायु सुगन्धि तथा मल को भी स्पर्श करती है। उसका अपना कोई गुण-दोष नहीं है। अतः हमको गुण-दोष से अलग रहना चाहिए। आत्मा में स्थिर होने से यह हो सकता है।

(३) तीसरा गुरु आकाश है। आकाश सब जगह व्याप्त है—स्थावर और जङ्गम में व्याप्त है, जैसे घड़े के भीतर आकाश है।

वह सीमित होते हुए भी सीमा-रहित है। इसी प्रकार हम सबमें जो आत्मा है वह उस परमात्मा का ही सीमित रूप है और शरीर में रहते हुए भी शरीर से सम्बन्ध नहीं रखता न इसका भाग ही किया जा सकता है। आकाश में मेघ आता है; परन्तु इससे आकाश पर कोई असर नहीं होता और वह अलग ही रहता है।

(४) चौथा गुरु जल (आप) है। तीर्थ-जल सुन्दर, स्वच्छ, और मधुर है। इसके स्पर्श, दर्शन और गुणगान से पवित्रता मिलती है। साधक में यही गुण होना चाहिए।

(५) पाँचवीं गुरु अग्नि है। अग्नि बड़ी तेजस्वी होती है। उसके पास आने का किसी में भी साहस नहीं है। वह जो-कुछ खाती है सब भस्म हो जाता है। इसकी शक्ति गुप्त है जैसे कि लकड़ी में आग गुप्त है। कभी प्रकट भी होती है। इच्छा न होते हुए भी जो-कुछ मिलता है उसके सब गुण-दोष को शुद्ध करती है। एक ही अग्नि प्रत्येक लकड़ी में होते हुए भी उपाधि-भेद से अलग-अलग प्रतीत होती है। साधक को भी इसी प्रकार निर्लिप्त रहना चाहिए।

(६) छठा गुरु चन्द्रमा है। इसकी कला घटती-बढ़ती है, परन्तु असली चन्द्रमा में कोई अन्तर नहीं होता। उसका रूप सदा एक-सा ही रहता है। इसी प्रकार बालक, युवा, वृद्ध, रोग इत्यादि शरीर का धर्म है; परन्तु आत्मा परिपूर्ण है। आत्मा में जन्म-मरण कुछ नहीं है। जैसे अग्नि में ज्वाला दिखायी देती है, यह ज्वाला कभी घटती है, कभी बढ़ती है और कभी अदृश्य हो जाती है; परन्तु इससे अग्नि में परिवर्त्तन नहीं होता।

(७) सातवाँ गुरु सूर्य है। सूर्य समुद्र में से जल ले जाकर पुनः वर्षा द्वारा उसे देता है। इसी प्रकार मनुष्य को द्रव्योपार्जन करके पात्र देख कर दान देना मैंने सूर्य से सीखा। दूसरी शिक्षा यह मिली कि सूर्य का प्रतिबिम्ब हजारों घड़ों में दिखायी देता है; परन्तु वह एक ही है, उसमें भेद नहीं है। इसी प्रकार एक ही भगवान् प्रत्येक प्राणी में आत्मा-रूप से दिखायी देता है।

(८) आठवाँ गुरु कबूतर है। कबूतर को अपने परिवार के चिड़ीमार के जाल में फँस जाने से कष्ट होता है। इसी प्रकार जो मनुष्य अपने कुटुम्ब में ही रत रहता है उसको अवश्य कष्ट उठाना पड़ता है; क्योंकि सब नाशवान् हैं। यह शरीर संसार को पार करने की नौका है; इसलिए इसका सदुपयोग करना चाहिए। किसी के भी साथ कभी बहुत ममता नहीं होनी चाहिए। केवल प्रभु के चरणों में ही प्रेम रखना चाहिए। ऐसा करने से सन्ताप नहीं मिलेगा।

(९) मेरा नवाँ गुरु अजगर सर्प है। अजगर एक ही स्थान पर पड़ा रहता है। जो आ जाता है वही खा लेता है। नहीं आने से कई दिन तक वैसे ही पड़ा रहता है। लेटता है, पर सोता नहीं। तुम भी अपने रूप में स्थित रहो। सोना मत। इन्द्रिय-सुख में मन मत लगाना। जो-कुछ मिले उससे सन्तुष्ट रहना।

(१०) दसवाँ गुरु समुद्र है। समुद्र वर्षा ऋतु में नदी में बाढ़ आने से बढ़ता नहीं और न ग्रीष्म ऋतु में घटता ही है। सदा अन्तर में बड़ा गम्भीर तेजस्वी रहता है। उसकी गहराई का पता नहीं चलता। मनुष्य को उसी प्रकार गम्भीर, क्षोभ-रहित, नारायण का आश्रित तथा एक रस रहना चाहिए। भोग

पदार्थ प्राप्त होने पर प्रफुल्लित और उनके न रहने पर उदास नहीं होना चाहिए।

(११) ग्यारहवाँ गुरु पतङ्ग है। पतङ्ग दीपक के रूप को देख कर मोहित हो जाता है और उसमें जल कर नष्ट हो जाता है। इसलिए मनुष्य को स्त्री के रूप, वेश इत्यादि पर मुग्ध नहीं होना चाहिए। नहीं तो उसकी भी दशा पतङ्ग जैसीही होगी। वह भी नष्ट हो जायगा।

(१२) मेरा बारहवाँ गुरु भौंरा है। मैंने उससे यह सीखा कि किसी की हिंसा मत करो। थोड़ा-थोड़ा आहार घूम-घूम कर प्राप्त करो। साधु को घर-घर जाकर मधुकरी प्राप्त करनी चाहिए; परन्तु न मिलने पर क्रोध नहीं करना चाहिए। किसी एक गृहस्थी में नहीं फँसना चाहिए नहीं तो वह नष्ट हो जायगा जैसे भौंरा रात में कमल के बन्द होने पर उसी में बन्द हो जाता है और इस तरह फँस कर नष्ट हो जाता है। शास्त्रों से सार लेना चाहिए जैसे कि भौंरा पुष्प से रस लेता है।

भौंरा भी दो प्रकार का होता है। एक भ्रमर और दूसरा मधुमक्खी। एक रस लाता है और दूसरी शहद बनाती है। मधु मक्खी से यह सीखा कि आजकी भिक्षा कल के लिए मत रखो नहीं तो शहद की तरह छिन जायगी। सञ्चय मत करो।

(१३) हाथी मेरा तेरहवाँ गुरु है। उसने यह सिखाया कि किसी स्त्री को स्पर्श मत करो। नहीं तो मेरी तरह जाल में फँस जाओगे। स्त्री यदि तुम्हें प्राप्त हो भी जाय तो दूसरे मनुष्य तुमसे लड़ाई करने को प्रस्तुत होंगे। इसलिए इससे बचो।

(१४) मधुहा (मधु निकालने वाला) मेरा चौदहवाँ गुरु है। शहद की मक्खी कञ्जूसी करके शहद को अपने व्यवहार में नहीं लाती। शहद-विक्रेता आकर छत्ता तोड़ कर शहद का अपहरण कर लेता है और मधुमक्खी इस सञ्चय के लाभ से वञ्चित हो जाती है। इसी प्रकार कञ्जूस व्यक्ति धन का सञ्चय तो करता है; परन्तु उसका उपभोग न स्वयं ही करता है, न उसको दूसरों को ही देता है। ऐसा धन या तो चोरी हो जाता है अथवा दूसरा उसका अपहरण करता है। इससे मधुहे से मैंने यह बात सीखी कि बिना प्रयत्न के भी आहार मिल जायगा। यह शिक्षा संन्यासी तथा ब्रह्मचारी के लिए है, गृहस्थ के लिए नहीं। गृहस्थ को अपने अतिथि (साधु इत्यादि) को दिये बिना भोजन नहीं करना चाहिए।

(१५) पन्दरहवाँ गुरु मैंने मृग को बनाया। मृग व्याध के गीत से मोहित हो कर बँध जाता है। इसलिए संन्यासी को विवाहोत्सव, ग्राम-गीत इत्यादि से अपने को अलग रखना चाहिए, जैसे वेश्या, दासी इत्यादि का गान होता है, नहीं तो वह बन्धन में पड़ जायगा।

(१६) मछली मेरी सोलहवीं गुरु है। मछली चारे के रस के कारण फँस जाती है। इससे यह सीखा कि रसना के वशीभूत मत होना। जब तक रसना पर संयम न होगा तब तक किसी भी इन्द्रिय पर संयम नहीं हो सकेगा। इसमें बोलना, खाना इत्यादि सभी इन्द्रियों के कर्मों से अभिप्राय है।

(१७) सतरहवीं गुरु पिङ्गला वेश्या है। वह वेश्या-वृत्ति से धन उपार्जन करती थी। अधिक-से-अधिक धन प्राप्त करने के लालच से वह एक व्यक्ति के बाद दूसरे की तलाश करती थी।

इस लालच में पड़ कर रात भीतर-बाहर आने-जाने में ही व्यतीत कर देती थी, रात भर सोती भी न थी। एक दिन प्रातः काल उसको यह विचार आया कि ऐसी मिथ्या आशा में रात न बिगाड़ कर एक ही मनुष्य से सन्तुष्ट रहती तो धन भी मिलता और नींद भी। इससे उसने यह शिक्षा ली कि जब तक विवेक और वैराग्य नहीं प्राप्त होगा तब तक ममता और आशा नहीं जा सकती और न शान्ति ही मिलेगी। मेरा पति (परमेश्वर) तो मेरे हृदय में ही है। वह नित्य रहने वाला है, सदा समीप है। वह प्रभु सुख तथा परमार्थ का सच्चा धन देने वाला है; शोक और मोह को दूर करने वाला है। मनुष्य को एक ही सद्गुरु पर निर्भर रहना चाहिए न कि वेश्या की तरह अनेकों के पास मारे-मारे फिरना चाहिए। आशा ही दुःख का कारण है। इसको छोड़ना चाहिए।

(१८) अठारहवीं गुरु चील है। चील से मैंने यह सीखा कि लालच नहीं करना चाहिए अन्यथा सङ्कट को आमन्त्रित करना होगा। एक चील को एक माँस का टुकड़ा मिल गया तो सारी चीलें उसके पीछे पड़ गयीं। उसने उस टुकड़े को छोड़ दिया तो उसका तो छुटकारा हो गया; परन्तु दूसरी चील ने उसको ले लिया। इससे बाकी चीलें अब उस दूसरी चील के पीछे पड़ गयीं। पहली चील ने मुझे परिग्रह सिखाया कि लालच नहीं करना चाहिए।

(१९) उन्नीसवाँ गुरु बालक है। बालक से मैंने यह सीखा कि व्यक्ति को चिन्ता, मान, अपमान-रहित तथा प्रसन्न रहना चाहिए। इससे व्यक्ति आत्मा में लीन रह कर आनन्द अनुभव कर सकता है। मूर्ख, जड़, बालक और ज्ञानी को कोई चिन्ता नहीं होती।

(२०) कुमारी भी मेरी गुरु है। उसका विवाह निश्चित करने के लिए घर वालों की अनुपस्थिति में उसको देखने के लिए उसके भावी श्वसुर इत्यादि के आने पर घर में खाद्य पदार्थ तैयार करने के हेतु जल्दी से वह स्वयं धान कूटना, पीसना आरम्भ कर देती है; परन्तु उन लोगों को इसका ज्ञान न हो कि उसको ही यह काम करना पड़ता है। इसलिए वह एक-एक करके चूड़ी उतार देती है और हाथ में केवल एक ही चूड़ी पहन कर काम करती है जिससे वह क्या कर रही है इसका उन लोगों को ज्ञान न हो। इससे यह शिक्षा मिली कि अकेले रहना सीखो। अनेक में रहना कलह पैदा करना है।

(२१) बाण बनाने वाला लोहार भी मेरा एक गुरु है। वह बाण बनाने में इतना तन्मय होकर उसको बनाता था कि एक दिन उसके घर के पास से राजा की सवारी निकली। परन्तु वह बाण बनाने में इतना एकाग्र चित्त था कि राजा की सवारी की धूम-धाम पर उसका ध्यान ही नहीं गया। उसको कुछ सुनायी ही नहीं पड़ा। इसी प्रकार हमको भी प्रभु के चरणों में मन को एकाग्र रखना चाहिए। मन चञ्चल है। वैराग्य और अभ्यास द्वारा, आसन, प्राणायाम द्वारा ही मन को वश में करना पड़ेगा। इसमें आलस्य नहीं आना चाहिए। उद्यम में ही लगे रहना चाहिए। धीरे-धीरे मन को तामस से हटा कर राजस में, फिर राजस से सात्त्विकता में लगाओ। ऐसा करते-करते मन के दूषण दूर हो जायेंगे और मन आत्मा में लग जायगा। बाण बनाने वाले लोहार की तरह तुम अपनी आत्मा में स्थिर हो जाओगे।

(२२) सर्प भी मेरा एक गुरु है। जिससे मैंने यह सीखा कि सर्प की तरह एकान्त में और छुपे हुए रहो। वह अपने

रहने के लिए घर नहीं बनाता। साधु को भी एकान्तवासी और अल्पभाषी होना चाहिए।

(२३) मकड़ी मेरी तेईसवीं गुरु है। मकड़ी अपनी क्रीड़ा के हेतु बहुत सुन्दर जाल बनाती रहती है। फिर उसी जाल को नष्ट कर देती है। वह अपने आप ही सृष्टि, स्थिति और संहार करती है। इसी प्रकार भगवान् भी पहले एक ही था। पश्चात् सारा प्रपञ्च रचा और फिर प्रलय करके सबको अपने में लय कर लिया। इससे मैंने यह सीखा कि भगवान् मकड़ी की तरह सृष्टि, स्थिति और प्रलय किया करते हैं।

(२४) कीटक मेरा चौबीसवाँ गुरु है। यह कीड़ा मिट्टी का घर-सा दीवार इत्यादि में बनाता है और उसमें दूसरे पास के कीड़ों को रखता है और उनके सामने रहता है। उसका ध्यान करते-करते वे कीड़े भी उसी का रूप धारण कर लेते हैं। इसी प्रकार से मनुष्य भी प्रभु का ध्यान करते-करते प्रभु का रूप धारण कर लेता है।

शरीर भी हमारा गुरु है। इसके बिना प्रभु की प्राप्ति नहीं हो सकती। तत्त्व-चिन्तन में इसको आवश्यकता है। परन्तु यह दूसरे की वस्तु है ऐसा बोध कराता है। इसमें अनासक्ति होनी चाहिए। शरीर से सम्बन्ध रखने वाली वस्तुओं से विरक्त रहने पर ही दुःख से छुटकारा मिल सकता है। इन्द्रियों को वश में न रखने से ये हमारी शत्रु बन जाती हैं और लोक और परलोक दोनों बिगाड़ देती हैं। लोक में रोग इत्यादि और अन्त में आत्म-लाभ से विमुखता मिलती है।

अवधूत जी कहते हैं कि इन सब गुरुओं से मुझे स्थिर

वैराग्य प्राप्त हुआ है और इस कारण हे राजा यदु ! मैं इस प्रकार विचरता रहता हूँ।

भगवान् कृष्ण ने उद्धव से कहा कि हे उद्धव ! अवधूत दत्तात्रेय जी ने यदु को यह उपदेश किया। मनुष्य को अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए अन्यथा दुःख ही प्राप्त होगा। भेद बुद्धि ही सारे अनर्थ के कारण है। संसार स्वप्न ही है। विचार करने योग्य तो यह है कि प्रत्येक कर्म निष्कर्म हो जाय। इसी से निवृत्ति प्राप्त होगी।

श्रीमद्भागवत में ऋषभ जी की कथा आती है। उनके बहुत से पुत्र थे। उनमें से एक का नाम भरत था। उन्होंने अपने पुत्रों को इस प्रकार उपदेश किया :—

"मेरे प्यारे पुत्रो ! इस संसार में अनेक पशु हैं जिनको नाना प्रकार के कष्ट और दुःख भोगने पड़ते हैं। उनका उद्देश्य खाना, पीना, सन्तान उत्पन्न करना इत्यादि ही रहता है। इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए उनको अनेक कठिनाइयाँ भोगनी पड़ती हैं। परन्तु तुम मानव हो। तुमको पशुओं की भाँति जीवन व्यतीत नहीं करना चाहिए। मेरे पुत्रो ! तुमको तपस्या करनी चाहिए।

तपस्या क्या है ? इसका अर्थ शरीर और मन को संयमित रखना है। तपस्या के द्वारा तुम्हारा मन शुद्ध होगा। दूषित भावना तुम्हारे मन में नहीं आयेगी। तुमसे सदा पवित्र ही पवित्र विचार आयेंगे और तुमको आनन्द—क्षणिक आनन्द नहीं—अपरिमित आनन्द प्राप्त होगा। इसी आनन्द को ब्रह्मानन्द कहते हैं।"

पुत्रों ने पिता से प्रार्थना की कि हमको क्या करना चाहिए जिससे हमको ऐसा अपरिमित आनन्द प्राप्त हो।

ऋषभ जी ने बतलाया कि इसके प्राप्त करने का साधन है महत् सेवा—महान् और विद्वानों की सेवा। महान् पुरुषों की सेवा से मुक्ति का द्वार खुल जायगा। यदि तुम नारी-जाति से घनिष्ठता रखोगे या उन पुरुषों से घनिष्ठता रखोगे जो स्त्री-व्यसन में पड़े हुए हैं तो तुम नरक में जाओगे, नरक के रास्ते में पहुँच जाओगे।

महान् पुरुषों की पहचान क्या है ? वे सदा एक-सी अवस्था में रहते हैं—प्रशान्त रहते हैं, सदा निश्चल रहते हैं और सन्तुलन बनाये रखते हैं। वे किसी से घृणा नहीं करते, न किसी पर क्रोध ही करते हैं। वे सबके सच्चे मित्र हैं। वे असली साधु हैं। उन्होंने भगवान् को ही अपना सच्चा मित्र और मार्गदर्शक बना लिया है। वे उन लोगों से मेलजोल नहीं रखते जो विशेषतया अपने शरीर से, स्त्री से तथा घर से ही आसक्ति रखते हैं। उनको संसार में अथवा स्वर्ग में कुछ नहीं भाता। उन्होंने सबका परित्याग कर दिया है।

मनुष्य ऐसे कर्म करते ही क्यों हैं जो अच्छे न हों ? यही उनकी भूल है। वे आकार और सुन्दरता में अन्धे होकर फँस जाते हैं। जैसे कि जब वे किसी सुन्दर रूप को देखते हैं तो इसका विचार किये बिना कि वह है क्या, तुरन्त अपने नेत्रों की तृप्ति के लिए पीछे दौड़ते हैं। ऐसा करना अनुचित है; क्योंकि वह केवल दिखावटी सुन्दरता है। यदि तुम उसके पीछे दौड़ोगे तो तुमको केवल कष्ट और दुःख ही मिलेगा।

'पराभवस्तावद बोधजातो, यावन्न जिज्ञासत आत्मतत्त्वम्'। जब तक तुमको अपने आत्मतत्त्व का यथार्थ ज्ञान नहीं होता, चाहे तुम सांसारिक दृष्टि से शिक्षित हो, तुम वास्तव में निरक्षर (ज्ञानहीन) हो। जब तक हमको सत्य का ज्ञान नहीं होता तब तक हम अपनी भौतिक इच्छाओं की तृप्ति हेतु लिप्त रहते हैं। यही सबसे बड़ा बन्धन है। 'मैं सब-कुछ हूँ। वास्तव में मैं ही ब्रह्म हूँ।' जब तक तुम इस 'मैं' को नहीं जानते, तब तक तुम्हारा मन स्त्री, पुत्र तथा अन्य लोगों के प्रति माने हुए कर्त्तव्यों के पीछे दौड़ता है।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्ति !!!

आत्मा का स्वरूप

निर्गुणोऽहं, निष्कलोऽहं, निर्ममोऽहं, निश्चलः ।
नित्यशुद्धो, नित्यबुद्धो, निर्विकारो, निष्क्रियः ॥
निर्मलोऽहं केवलोऽहं, एकमद्वयमप्यहम् ।
भास्वरोऽहं, भास्करोऽहं, नित्यतृप्तश्चिन्मयः ॥
पूर्णकामः पूर्णरूपः पूर्णकालः पूर्णदृक् ।
आदिमध्यान्तहीनो जन्म-मृत्यु-विवर्जितः ॥
सर्वकर्त्ता, सर्वभोक्ता, सर्वसाक्षी सोऽस्म्यहम् ।
सर्वव्यापी, मद्व्यतीतो, नाऽस्ति किञ्चन क्वाप्यहो ॥
आनन्दोऽहं, अनन्तोऽहं, सद्रूपः चिद्रूपोऽहम् ।
अहं ब्रह्मास्मि, ब्रह्मास्मि, ब्रह्मैवाहं सदाशिवः ॥ ॐ ॥

भावानुवाद—

निर्गुण, निष्कल, निर्मम, निश्चल, हूँ क्रियाहीन, हूँ निर्विकार।
निर्मल हूँ मैं, केवल हूँ मैं, हूँ अद्वितीय जग एक सार॥
मैं सूर्यरूप, जाज्वल्यमान्, ज्योतिःप्रद चिन्मय नित्य तृप्त।
हूँ पूर्णकाम, मैं पूर्णरूप, सबका द्रष्टा निजरूप गुप्त॥
हूँ पूर्णकाल, हूँ आदि, मध्य औ अन्तहीन, गत-जन्म-मीच।
सबका कर्त्ता भोक्ता साक्षी, सोऽहं स्वरूप सबसे अतीत॥
सबमें व्यापक हूँ, सभी ठौर, मुझसे न कहीं कुछ भी अतीत।
आनन्दरूप मैं हूँ अनन्त, सद्रूप सदा चिद्रूप सदा॥
हूँ ब्रह्मरूप, मैं ब्रह्ममात्र, कुछ अन्य नहीं शिवरूप सदा।

परिशिष्ट

ब्रह्मलीन श्री १००८ स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज की संक्षिप्त जीवनी

ऋषिकेश से २२ किलोमीटर दूर बद्रीनाथ मार्ग पर गूलरदोगी नामक स्थान है जहाँ वशिष्ठ-गुहा स्थित है। इस गुहा के समीप गदरा और गङ्गा नदियों का सङ्गम है। सुप्रसिद्ध वशिष्ठ मुनि के आश्रमों में जो एक प्रधान आश्रम गङ्गा-तट पर था, वही वशिष्ठ-गुहा के नाम से जाना जाता है। इसी आश्रम में उन्होंने तप किया था।

यह गुहा पहले बहुत लम्बी और गहरी थी। एक समय गङ्गा जी में भयङ्कर बाढ़ आने के कारण पूरी गुहा बालू तथा मिट्टी से भर गयी थी। बाद में तत्कालीन टिहरी नरेश ने, जो श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज के बड़े भक्त थे, इस गुहा के आगे के दो भागों को साफ करा कर साधना के लिए सुविधाजनक बनाया। स्वामी जी ने पूरी गुहा को साफ करना अनावश्यक समझ कर इतना ही करने दिया।

उस समय यह गुहा बड़ी रमणीक होते हुए भी बड़ी दुगम थी। पूर्ण निर्जन तो थी ही, न कोई सड़क ही थी और न कोई पगडण्डी ही। वहाँ पहुँचना बहुत ही कठिन था। कालान्तर में, विशेषकर चीन के भारत पर आक्रमण के पश्चात्, यह बीहड़ स्थान अब अच्छी सड़क और यातायात की अच्छी व्यवस्था हो जाने से पहुँचने के लिए सुगम हो गया है। गुहा के दो भाग हैं।

अगले भाग में प्रकाश मिलता है; परन्तु भीतर वाले भाग में, जहाँ श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज तपस्या करते थे, अन्धकार है और प्रकाश के लिए अपने साथ कुछ लेकर जाना पड़ता है। महर्षि वशिष्ठ जी की इसी तपस्थली को श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज ने अपनी साधना के लिए चुना।

श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज का जन्म केरल राज्य के तिरुव्वल्ला नामक स्थान पर वल्लभ-मन्दिर के निकट एक घर में हुआ था। इनकी माता का नाम श्रीमती पार्वती अम्मा और पिता का नाम श्री नारायण नैयर था। माता को बहुत समय तक कोई सन्तान नहीं हुई। अतः उन्होंने पुत्र की कामना से देवोपासना और जप-ध्यान करना आरम्भ कर दिया। उनकी कामना पूर्ण हुई और मलयालम संवत् १०५५ वृश्चिक के सूर्य के नवें अंश पर, उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में, रविवार २३ नवम्बर १८७९ ईसवी के दिन उनको एक पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। उस शिशु का नाम नीलकण्ठ रखा गया। यह नीलकण्ठ ही कालान्तर में वशिष्ठ-गुहा के सन्त श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज हुए।

नीलकण्ठ जब पाँचवें वर्ष में थे तभी उन्हें विद्यालय में प्रविष्ट कराया गया। प्रखर बुद्धि होने के कारण अल्पकाल में ही उन्होंने उस विद्यालय की परीक्षा पूर्ण कर ली और उन्हें सेण्ट्रल स्कूल भेजा गया। वहाँ के अध्यापक उनसे बड़े ही प्रसन्न रहे और लगभग चार वर्ष की अवधि में उन्होंने वहाँ की उच्चत्तम कक्षा उत्तीर्ण कर ली। परीक्षाओं में अच्छी सफलता मिलने के कारण उन्हें अनेक पारितोषिक प्राप्त हुए। वहाँ की पढ़ाई पूरी करके उन्होंने कोट्टयम के सी० एम० एस० कॉलेज में प्रवेश

लिया और पाँचवें फार्म की परीक्षा उत्तीर्ण की। वे छात्रावास में रहते थे।

जब एक दिन वे कालेज से छात्रावास आये तो एकाएक उनकी टाँग में पीड़ा होने लगी। वहाँ की चिकित्सा से लाभ न होने के कारण उनको विवश हो कर माता-पिता के पास घर आना पड़ा। घर पर ही चिकित्सा आरम्भ हुई और पाँच वर्ष तक चली। माता-पिता ने (जो दोनों ही बड़े भगवद्भक्त और सन्तोषी जीव थे) इस अस्वस्थता की अवधि में अपने पुत्र को श्रीमद्भागवत तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थ पढ़ कर सुनाये। नीलकण्ठ को इनमें बड़ा रस आने लगा। इनके मन में संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई जिससे वे संस्कृत भाषा के आध्यात्मिक ग्रन्थों को मूल रूप से पढ़ सकें। अतः रोग-शैय्या पर ही उन्होंने संस्कृत का अध्ययन करके उस भाषा पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया।

यद्यपि नीलकण्ठ की चिकित्सा पाँच वर्ष तक हुई और उससे लाभ भी हुआ; परन्तु रोग से पूर्ण रूप से मुक्ति नहीं हुई। कुछ भक्तों से यह सुन कर कि 'नारायणीयम्' ग्रन्थ के रचयिता नारायण भट्टतिरी भगवान् गुरुवायूर की कृपा से रोग से मुक्त हो गये थे, नीलकण्ठ एक रात को चुपके से गुरुवायूर के मन्दिर के लिए चल पड़े और एक पत्र लिख कर घर पर छोड़ गये कि कोई उनके लिए चिन्ता न करे। यद्यपि मार्ग बहुत लम्बा था और पैर की पीड़ा के कारण पैदल चलना बहुत ही कष्ट-कारी था, फिर भी भगवान् पर पूर्ण विश्वास रखते हुए धीरे-धीरे मार्ग में पड़ने वाले अनेक तीर्थों की यात्रा करते हुए वे गुरुवायूर के प्रसिद्ध मन्दिर पहुँचे। वहाँ भगवान् की विधिवत्

पूजा-आराधना आरम्भ कर दी और भगवद्दर्शन और सत्सङ्ग में समय बिताने लगे। इनकी इस भगवदाराधना के फलस्वरूप वे पाद-पीड़ा से मुक्त हो गये और स्वस्थ हो कर घर लौट आये। उनके घर लौटने के कुछ दिनों बाद ही उनके पिता जी का स्वर्गवास हो गया। पति के वियोग में पार्वती अम्मा बीमार पड़ गयीं और तीन दिन के बाद ही वे भी दिवङ्गत हो गयीं।

अब निर्द्वन्द्व हो कर नीलकण्ठ ने पूर्णरूपेण आत्मज्ञानार्थ अपने को लगाया। अनेक धर्म-ग्रन्थों का विशेष रूप से भागवत तथा उपनिषदों का अध्ययन किया और पूरी तरह से अपने को भगवान् की इच्छा पर छोड़ दिया। अब दिन-रात का अधिकांश समय जप, ध्यान तथा धर्मग्रन्थों के अध्ययन-अनुशीलन में लगाने लगे। वे भागवत की व्याख्या बहुत अच्छी तरह करते थे जिसके कारण अनेक सुशिक्षित लोग उनकी ओर आकर्षित हुए।

तिरुव्वल्ला में एक सज्जन श्रीरामकृष्ण परमहंस जी के परम भक्त थे और एक 'रामकृष्ण सङ्घ' चलाते थे जिसमें प्रायः धर्मचर्चा, ध्यान, भजन, कीर्तनादि होते थे। उन्हीं की प्रेरणा से नीलकण्ठ भी सङ्घ की बैठक में जाने लगे और अल्पकाल में ही उसके अध्यक्ष बना दिये गये। एक बार श्री स्वामी निर्मलानन्द जी के सम्पर्क में आने की भावना उठी। उन्होंने श्री रामकृष्ण परमहंस जी से दीक्षा-प्राप्त की थी और उस समय बैङ्गलोर-स्थित रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष थे। नीलकण्ठ अपने साथियों के साथ उनके सम्पर्क में आये और बहुत प्रभावित हुए। स्वामी जी ने उनको 'भक्त' नाम दिया और संन्यास लेने तक वे इसी नाम से पुकारे जाते रहे। स्वामी जी

के सम्पर्क में आने के बाद उक्त स्वामी श्री नीलकण्ठ को समय-समय पर पत्र तथा दर्शन देकर अध्यात्म-पथ पर तीव्र गति से चलने को प्रोत्साहित करते, प्रेरणा देते और मार्गदर्शन कराते रहते थे। उन्हीं की प्रेरणा से तिरुव्वल्ला में रामकृष्ण मिशन की स्थापना हुई और नीलकण्ठ उसके सञ्चालक नियुक्त हुए।

नीलकण्ठ ध्यान-भजन की अपेक्षा आश्रम के निर्माण-विकास में अधिक समय लगाते थे। एक बार जब श्री स्वामी निर्मलानन्द जी आश्रम में पधारे तो नीलकण्ठ की दिनचर्या देख कर उन्होंने बड़ी कठोरता से कहा—"यह क्या है ? तुम भक्त होने का दिखावा करते हो। तुम पत्थर और लकड़ी के आश्रम की इतनी चिन्ता क्यों करते हो ? अपने हृदय को आश्रम बनाओ। वहाँ गुरु महाराज (श्री रामकृष्ण जी) की प्रतिष्ठा करो।"

सन् १९१६ में श्री स्वामी निर्मलानन्द जो की कृपा से श्री रामकृष्ण परमहंस जी के परम प्रिय शिष्य तथा रामकृष्ण मिशन के प्रथम अध्यक्ष श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज ने (जो राखल और श्री महाराज नामों से जाने जाते थे) नीलकण्ठ को मन्त्र-दीक्षा प्रदान की। अक्तूबर १९२३ शरद पूर्णिमा के दिन रामकृष्ण मिशन के तत्कालीन अध्यक्ष श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने (जो महापुरुष नाम से जाने जाते थे) बेलूर मठ, कलकत्ता में नीलकण्ठ को संन्यास प्रदान किया और उनका नाम स्वामी पुरुषोत्तमानन्द पुरी जी हुआ।

सन् १९१३ से १९२३ तक उन्होंने रामकृष्ण मिशन के विभिन्न आश्रमों का सञ्चालन किया, अनेक तीर्थों की यात्रा की, कठोर तप तथा अध्ययन किया और वे अनेक श्रेष्ठ सन्त

पुरुषों के सम्पर्क में आये। उनके भीतर वैराग्य भावना स्थिर हो गयी थी, भगवत्साक्षात्कार की उत्कण्ठा बलवती हो गयी थी। इससे उन्हें आश्रम-सञ्चालन का कार्य अपने मार्ग में बाधक प्रतीत होने लगा। फलस्वरूप रामकृष्ण मिशन के कार्य-भार से मुक्त होकर वे तीर्थ-सेवन के लिए निकल पड़े। उत्तर भारत के समस्त तीर्थों के दर्शन करते हुए वे ऋषिकेश पहुँचे। वहाँ उन्हें ऋषिकेश से २२ किलोमीटर दूर बद्रीनाथ मार्ग पर स्थित वशिष्ठ-गुहा का पता चला। अक्तूबर १९२९ में वे इस गुहा में पहुँच गये। उस समय वहाँ जाने के लिए न तो कोई सड़क ही थी और न पगडण्डी ही। घोर निर्जन वन में यह गुहा स्थित थी। जङ्गली जानवर जैसे शेर, चीते, तेन्दुए इत्यादि गुहा के पास स्वच्छन्दता से घूमा करते थे। साँप, बिच्छू आदि गुहा के अन्दर विचरण करते थे। वर्षा ऋतु में गङ्गा जी का जल बाढ़ के कारण इसमें प्रवेश कर जाता था। भगवान् पर पूर्ण आस्था होने के कारण उन्होंने इन सब कठिनाइयों की अवहेलना करके इस गुहा को अपनी तपोभूमि बनाया और अन्त तक इसी में रह कर तप करते रहे। यद्यपि उन्होंने कोई सङ्गठन नहीं बनाया और न विज्ञान के आधुनिक साधनों का ही कोई उपयोग किया बल्कि इस दुर्गम स्थान को ही अपनी साधनास्थली बना कर गुप्त जीवन यापन करते रहे तथापि उनके तप का ऐसा व्यापक प्रभाव हुआ कि स्वदेश तथा अनेक पाश्चात्य देशों से लोग उनके दर्शनों के लिए आते रहते थे और अपनी आवश्यकतानुसार लाभ उठाते रहते थे। उनमें जाति, धर्म अथवा राष्ट्रीयता का तनिक भी भेदभाव नहीं था। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी से बड़े प्रेम से मिलते थे और हर एक के अनुकूल साधना-पथ का दर्शन कराते थे। उनका कहना

था कि लक्ष्य एक ही है। मार्ग ही अलग-अलग हैं। जिसको जो मार्ग अनुकूल हो उसको ले कर साधना करनी चाहिए। सबके लिए एक ही मार्ग नहीं होता।

एक बार उस समय के उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणकलाल मुंशी उनके दर्शनों के लिए इस गुहा में पधारे थे और वे इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने स्वामी जी के दर्शनों के अनुभव तथा प्रभाव 'पायनियर' दैनिक पत्र, लखनऊ, में, कुलपति के पत्र' नम्बर ३२; शीर्षक में, दिनाँङ्क २३ मई, १९५३ को, भवन जर्नल में तथा 'मेरी बद्रीनाथ यात्रा' नामक पुस्तक में प्रकाशित किये।

दक्षिण के विश्वविख्यात अलौकिक सन्त सत्य साँई बाबा स्वामी जी के दर्शन के लिए गुहा पधारे थे। साँई बाबा ने योग-बल से तत्काल एक सुन्दर स्फटिक की माला उत्पन्न करके स्वामी जी को भेंट की। नेपाल के राजकुमार सपत्नीक स्वामी जी के दर्शन को आये थे और उनको नेपाल में राजकीय अतिथि के रूप में कुछ दिन रखा भी था। सुप्रसिद्ध योगी स्वामी शिवानन्द जी आपका विशेष समादर करते थे।

एक बार ऋषिकेश में अमरीकी वैज्ञानिकों का दल आया था जो यन्त्रों द्वारा ध्यान और समाधि की अवस्था का अध्ययन करना चाहता था। ऋषिकेश में सैकड़ों साधु-संन्यासी रहते थे, लेकिन इन सभी साधकों तथा सिद्धों ने ध्यानकी अवस्था में यन्त्रों द्वारा परीक्षा कराने के लिए अपनी असमर्थता प्रकट की। केवल स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी तथा हिमालय वाले स्वामी रामजी ने ही परीक्षा के लिए स्वीकृति दी थी। स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी की जब वैज्ञानिकों ने परीक्षा की तो उनको

बड़ा आश्चर्य हुआ था; क्योंकि जो परिणाम निकले थे उनसे विज्ञान के अनेक प्रतिष्ठित सिद्धान्तों का खण्डन होता था।

श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि वासनाओं पर पूर्ण विजय प्राप्त कर चुके थे। सांसारिक प्रलोभन उनको कभी विचलित नहीं कर सके। वह सत्-चित्-आनन्द के साक्षात् स्वरूप थे। वह मितभाषी थे और अनावश्यक सम्भाषण नहीं करते थे। शिष्यों, तथा भक्तों को अधिक उपदेश नहीं देते थे। उनमें इतनी अधिक आध्यात्मिक शक्ति थी कि जो जिज्ञासु उनके निकट पहुँच जाता था, वह आनन्द की असाधारण स्थिति को प्राप्त कर लेता था, उसकी शङ्काओं तथा समस्याओं का स्वतः समाधान हो जाता था, उसके दुःखों का अन्त हो जाता था और उसको अनिर्वचनीय शान्ति प्राप्त हो जाती थी।

स्वामी जी पूर्ण रूप से ईश्वर पर आश्रित थे और अपने शिष्यों को भी ऐसा ही होने का सुझाव देते थे। उन्होंने किसी से माँगना बहुत पहले ही छोड़ दिया था, लेकिन उनको किसी भी वस्तु की कमी न रहती थी। आश्रम में जो भी लोग आते थे उन सबका भोजन आदि से स्वागत होता था। उनके आश्रम के आसपास हिंसक जीव-जन्तु रहते थे, लेकिन कभी कोई दुर्घटना नहीं हुई।

एक बार शारीरिक व्याधि के कारण उन्होंने आत्महत्या का निश्चय किया। जैसे ही वे गङ्गा में कूदने को उद्यत हुए, उनके कानों में स्पष्ट आवाज आयी कि अमुक डाक्टर के पास जाओ। जब उन्होंने पता लगाया तो उस नाम का डाक्टर उनको मिल गया और उसने उनको स्वस्थ कर दिया।

स्वामी जी के जीवन में दैवी सहायता की असङ्ख्य घटनाएँ हैं। वस्तुतः उनका जीवन इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण है कि यदि मनुष्य वासनाओं का त्याग करके भगवान् पर पूर्णतया निर्भर रहे तो भगवान् उसके लौकिक तथा पारलौकिक योगक्षेम की पूर्ण व्यवस्था करते हैं।

स्वामी जी में स्वेच्छानुसार शरीर-त्याग करने की शक्ति थी। देह-त्याग करने का विचार उन्होंने पहले ही बता दिया था; परन्तु कोई निश्चित समय का संकेत नहीं किया था। केवल इतना ही कहा था कि वे अधिक समय तक शरीर नहीं रखेंगे। इस बात को गुप्त रखने का आदेश दे दिया था। अतः यह बात वहीं तक सीमित रही।

१० फरवरी, १९६१ के प्रातःकाल उन्होंने यह जानना चाहा कि एकादशी तथा शिवरात्रि कब है? पञ्चाङ्ग देखने पर यह ज्ञात हुआ कि एकादशी दूसरे ही दिन अर्थात् ११ फरवरी को और शिवरात्रि १३ फरवरी को है।

दूसरे दिन, फाल्गुन कृष्ण एकादशी, विक्रमी संवत् २०१७ तदनुसार ११ फरवरी, १९६१ को प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त हो कर सदा की भाँति स्वामी जी अपने स्थान पर विराजमान हुए और गुहा में उपस्थित सबको बुलाकर हाथ-पैर धोकर अपने सामने आसन लगा कर सीधे इस तरह बैठने को कहा कि एक दूसरे को कोई छूए नहीं। सबके आसन ग्रहण करने पर उन्होंने आत्मा, भगवदनुग्रह, समर्पण, सत्यनिष्ठा, पारस्परिक प्रेम, शक्ति-सम्पन्नता इत्यादि पर कुछ उपदेश दिये और सब को एक-एक करके अपने निकट बुला कर सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम लोग कभी

भी भगवान् को मत भूलना, तुम्हारा सदा परम कल्याण होगा। मेरे लिए दुःखी मत होना, मैं सदा तुम्हारे साथ रहूँगा। देह-त्याग के बाद अपने शरीर को गङ्गा में प्रवाहित करने का भी आदेश दिया। उस समय से शिवरात्रि, १३ फरवरी १९६१ तक वे पूरी तटस्थ मुद्रा में रहे। शिवरात्रि के दिन स्नानादि के पश्चात् कमरे में ध्यान करके जब वे बाहर निकले तो वहाँ तख्त पर बैठ गये और गीता के आठवें अध्याय (जो ब्रह्म-सम्बन्धी है) और सप्तशती के ग्यारहवें अध्याय (देवी-स्तुति) का पाठ हुआ और सायङ्काल ५ बजे तक वहीं बैठे रहे। बाद में कमरे में चले गये। रात्रि में अन्तिम बार थोड़ा दूध लिया। रात्रि के लगभग ९ बजे निद्रा आ जाने के लिए एक गोली लेने का भक्तों ने आग्रह किया तो बोले कि जल्दी दो, मैं सदा के लिए सोने जा रहा हूँ। गोली जल्दी से निगल कर सबको कहा कि तुम लोग जाओ, मैं ठीक हूँ। परन्तु एक-एक करके आदमी बारी-बारी से उनके पास बना रहा, उनको अकेला नहीं छोड़ा।

रात्रि १०-५० बजे एक मृदु कण्ठ से प्रणव का उच्चारण करके उन्होंने महासमाधि ले ली। उस समय हलका भूकम्प-सा अनुभव हुआ। उपस्थित लोगों को कुछ समय तक तो यही भ्रम रहा कि महाराज जी जैसे समाधि लगाया करते थे, उसी प्रकार की समाधि में हैं और गीता का पाठ चलता रहा; परन्तु थोड़े ही समय में यह ज्ञात हुआ कि वे ब्रह्मलीन हो गये। गुहा में कुहराम मच गया।

पञ्चाङ्ग के अनुसार यह दिन फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी के उपरान्त चतुर्दशी, विक्रमी संवत् २०१७ सोमवार, तदनुसार

१३ फरवरी १९६१ था। उस दिन सोम प्रदोष के उपरान्त महाशिवरात्रि का होना एक महान् पर्व भी था। इसके साथ ही ब्रह्मलीन होने का समय (रात्रि १०-५०) शिवरात्रि की रात्रि का दूसरा प्रहर होने के कारण विशेष महत्त्व का था। हमारे शास्त्रों के अनुसार महाशिवरात्रि की रात्रि के चार प्रहरों में दूसरा प्रहर सबसे अधिक महत्त्व का होता है; क्योंकि मध्यरात्रि की सन्धि इस दूसरे प्रहर के अन्त में होती है। इस समय को 'लिङ्गोद्भव' मुहूर्त्त कहते हैं। इसी मुहूर्त्त में परब्रह्म का ज्योति-लिङ्ग में प्रादुर्भाव हुआ था।

दूसरे दिन यथोचित पूजनादि के पश्चात् उनके पार्थिव शरीर को पूर्व आदेशानुसार गङ्गा माता की गोद में दिन के ३ और ४ बजे के मध्य अर्पण कर दिया गया। तत्पश्चात् संन्यासियों के देह-त्याग के उपरान्त जो संस्कार होते हैं वे विधिपूर्वक बड़ी श्रद्धा और भक्ति से किये गये।

स्वामी जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् इस तपो-भूमि में उनकी स्मृति में एक स्मारक का निर्माण हुआ। स्वामी जी महाराज ने इस स्थान को अपनी कठिन साधना और अखण्ड तपस्या से आलोकित करके सबके लिए सुखद और पाप-तापहारी तीर्थ बना कर छोड़ा है। भक्तजन प्रेरणा प्राप्त करने के हेतु यहाँ आते रहते हैं विशेषकर गुरुपूर्णिमा तथा इनके जन्मदिन पर इनके बहुत से भक्त बड़ी श्रद्धा और भक्ति से पूजन कर आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु दूर-दूर से उपस्थित होते हैं। जय श्री गुरुदेव !